योगविद्या

वर्ष 5 अंक 1
जनवरी 2016
सदस्यता डाकखर्च – रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योग विद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी शक्तिमित्रानन्द सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2016

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 62 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर फोटो : बाल योग दिवस 2015

अन्दर के रंगीन फोटो : 1: श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती; 2: श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती, मुंगेर, 1968; 3: श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती, रिखिया, 2008; 4: स्वामी निरंजनानन्द, 1990; 5: स्वामी निरंजनानन्द, 1990; 6-7: बाल योग दिवस 2015; 8: श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती, रिखिया, 2006

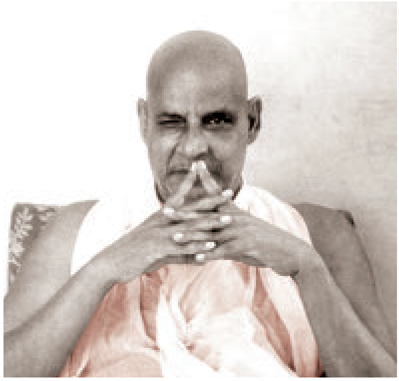

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

चरित्र

मनुष्य में जितने सद्‌गुण होते हैं, उन सबको मिला कर चरित्र कहते हैं। चरित्र से ही मनुष्य शक्तिशाली और तेजस्वी होता है। लोग कहते हैं कि 'ज्ञान ही शक्ति है' पर मैं पूरे जोर के साथ कहता हूँ कि 'चरित्र ही शक्ति है।' चरित्र के बिना ज्ञानार्जन असम्भव है। चरित्रहीन व्यक्ति इस संसार में मृतप्राय है। समाज उसे तिरस्कार और उपेक्षा की दृष्टि से देखता है।

यदि तुम अपने जीवन में सफल होना चाहते हो, दूसरों को प्रभावित करना चाहते हो, सांसारिक और आध्यात्मिक मार्ग में प्रगति करना चाहते हो तो तुम्हारा चरित्र निष्कलंक होना चाहिए। शंकराचार्य, बुद्ध, ईसा और प्राचीन ऋषियों को आज भी याद किया जाता है क्योंकि उनका चरित्र दिव्य और अद्भुत था। वे लोग अपने चरित्रबल से ही दूसरों को प्रभावित और उनके हृदय को परिवर्तित कर सके।

–श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर-811201, बिहार के लिए स्वामी ज्ञानभिक्षु सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद-121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय   **सम्पादक** – स्वामी शक्तिमित्रानन्द सरस्वती

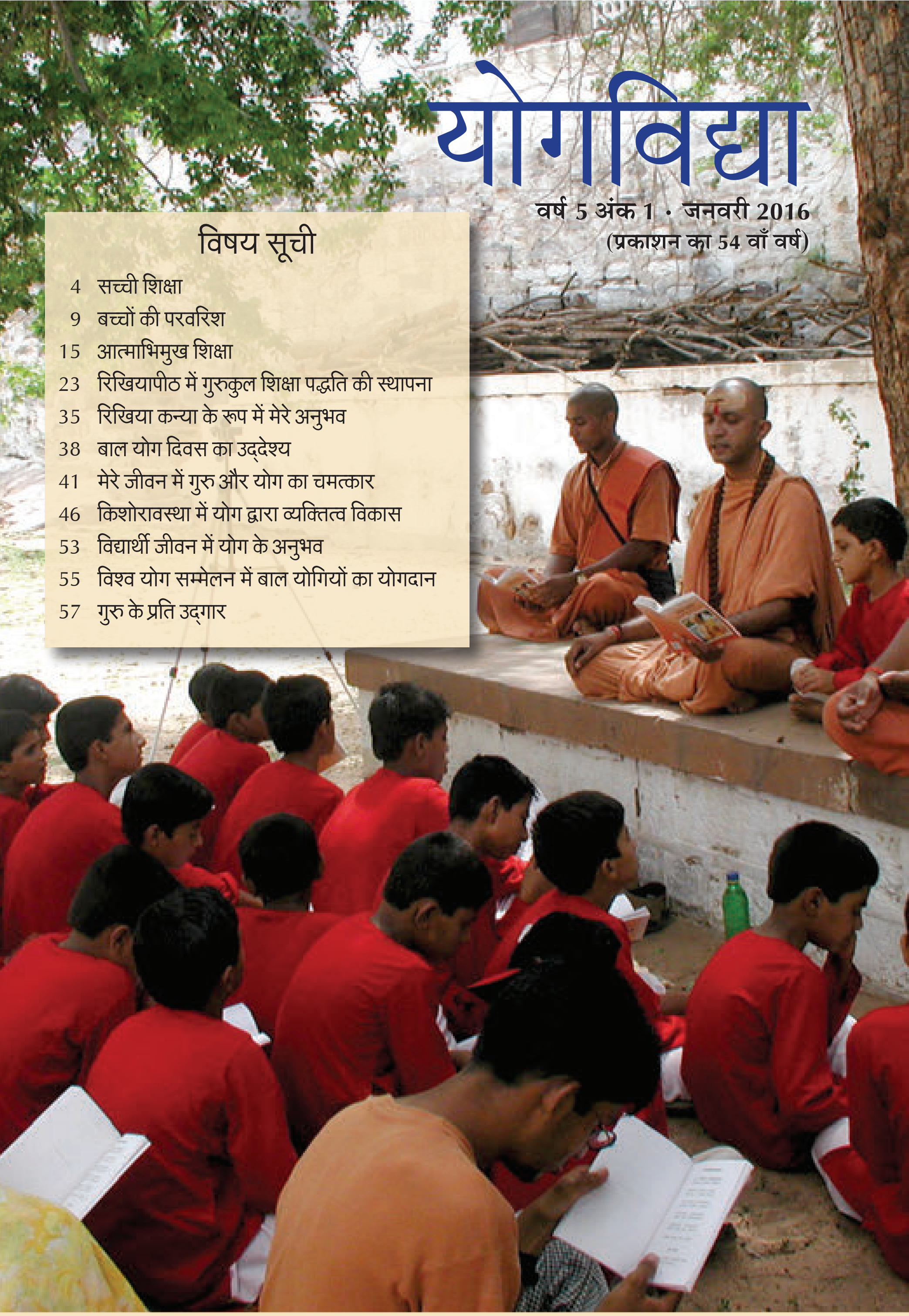

योगविद्या

वर्ष 5 अंक 1 • जनवरी 2016
(प्रकाशन का 54 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 सच्ची शिक्षा
9 बच्चों की परवरिश
15 आत्माभिमुख शिक्षा
23 रिखियापीठ में गुरुकुल शिक्षा पद्धति की स्थापना
35 रिखिया कन्या के रूप में मेरे अनुभव
38 बाल योग दिवस का उद्देश्य
41 मेरे जीवन में गुरु और योग का चमत्कार
46 किशोरावस्था में योग द्वारा व्यक्तित्व विकास
53 विद्यार्थी जीवन में योग के अनुभव
55 विश्व योग सम्मेलन में बाल योगियों का योगदान
57 गुरु के प्रति उद्गार

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक: । कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥

सच्ची शिक्षा

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

शिक्षा जीवन रूपी वृक्ष का मूल है, संस्कृति फूल और विवेक उसका फल। शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य को उच्चतर संस्कारों और संस्कृति से सम्पन्न बनाना है। सच्चा मनुष्य बनने की शिक्षा ही सच्ची शिक्षा है। इसका लक्ष्य बच्चों की बौद्धिक क्षमताओं को निखारना और उन्हें धर्मनिष्ठ, निष्कपट, निर्भीक तथा आत्म-संयत बनाना है। शिक्षा को मानव-निर्माण एवं चरित्र-निर्माण का ऐसा माध्यम होना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों के जीवन के शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक पहलुओं का सम्पूर्ण विकास हो सके।

शिक्षा का तात्पर्य सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास से है। कलात्मक, वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक शिक्षा द्वारा मनुष्य की बुद्धि, भावना और कर्म का परिष्कार होना चाहिए। शरीर, मन, बुद्धि एवं आत्मा का सामंजस्यपूर्ण विकास होना चाहिए। शिक्षा इस प्रकार सुनियोजित होनी चाहिए कि इससे सादा जीवन और उच्च विचार की संस्कृति विकसित हो सके। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बच्चों को अपने वातावरण से समायोजन बैठाने, जीवन-संघर्षों का सामना करने तथा आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने हेतु सहायक हो। शिक्षा ऐसी हो जो विद्यार्थियों को सत्यनिष्ठ, नैतिक, निर्भय, नम्र एवं दयालु बनना तथा ईश्वर एवं मानवता से प्रेम करना सिखाए। यह ऐसी होनी चाहिए जिससे वे अपने जीवन में सद्विचार, सत्कर्म, सद्व्यवहार, आत्म-त्याग तथा सही जीवन-शैली को अपना सकें। वास्तविक शिक्षा वह है जिससे ईश्वर तथा मानवता के प्रति सेवा-भाव विकसित हो। अन्ततः शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति में अन्तर्निहित दिव्यता को उजागर करना है। आध्यात्मिक ज्ञानोदय सच्ची शिक्षा का स्वाभाविक फल है।

शिक्षक-विद्यार्थी सम्बन्ध

प्राचीन भारत में गुरु और शिष्य, शिक्षक और विद्यार्थी के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ करता था। अब इसे पुनर्जीवित करना चाहिए। यह सम्बन्ध व्यावसायिक नहीं, बल्कि स्नेही पिता एवं निष्ठावान् पुत्र के सम्बन्ध जैसा होना चाहिए। यह जरूरी है कि शिक्षक एवं विद्यार्थी एक-दूसरे को अच्छी तरह समझें। शिक्षक को विद्यार्थी का स्नेही मार्गदर्शक होना चाहिए, न कि निरंकुश शासक। विद्यार्थी के मन में शिक्षक के प्रति आदर और प्रेम का भाव होना चाहिए, न कि भय अथवा घृणा का। शिक्षक का प्रमुख उत्तरदायित्व यह है कि वह विद्यार्थी का आदर एवं प्रेम प्राप्त करे। तभी उसके द्वारा प्रदत्त शिक्षा प्रभावी होगी।

विद्यार्थियों के प्रशिक्षण का महान् दायित्व विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के शिक्षकों तथा प्राध्यापकों पर है। उन्हें स्वयं पूर्णतः शुद्ध, सदाचारी एवं नैतिक होना चाहिए। तभी वे विद्यार्थियों को सही शिक्षा प्रदान कर सकेंगे। शिक्षक के रूप में कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व प्रत्येक शिक्षक को अपने पद के महान् दायित्व को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। केवल नीरस व्याख्यान-कला से किसी अध्यापक को प्रतिष्ठा नहीं मिल सकती।

शिक्षकों और प्राध्यापकों को आध्यात्मिक प्रवृत्ति से युक्त होना चाहिए। उन्हें नियमित रूप से आध्यात्मिक साधना एवं ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। उनकी जीवन-शैली आध्यात्मिक होनी चाहिए। तभी शिक्षकों का व्यक्तित्व विद्यार्थियों के लिए अनुकरणीय होगा। विद्यार्थियों को अपने शिक्षकों के व्यक्तिगत जीवन से प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए।

शिक्षकों को भावी नागरिकों के निर्माण-कार्य में पूर्णतया सेवारत रहना चाहिए। उन्हें एक उत्साही आध्यात्मिक नायक होना चाहिए। राज्य को चाहिए कि वह शिक्षकों को पर्याप्त साधन उपलब्ध कराए ताकि वे आर्थिक कठिनाइयों से पूर्णतः मुक्त रह सकें।

महाविद्यालयों के प्राचार्यों तथा विद्यालयों के अध्यापकों को विद्वान् एवं आत्मज्ञान-सम्पन्न संन्यासियों एवं योगियों का मार्गदर्शन प्राप्त होना चाहिए। तभी विद्यार्थियों को सही शिक्षा प्रदान की जा सकती है। यदि विश्वविद्यालयों से प्रति वर्ष सही शिक्षा से युक्त विद्यार्थी बाहर आयेंगे तो नये गौरवमय भारत का निर्माण अवश्य होगा और सुख, शान्ति एवं समृद्धि का एक नया युग प्रारम्भ होगा।

ऋषि-युग की शिक्षा-व्यवस्था

यदि आप आधुनिक शिक्षा-पद्धति की तुलना प्राचीन गुरुकुल पद्धति से करें तो दोनों के बीच बहुत बड़ा अन्तर पाएँगे। आधुनिक विश्वविद्यालयों की तथाकथित धर्मनिरपेक्ष शिक्षा एवं ऋषियों की आध्यात्मिक शिक्षा की भिन्नता पर ध्यान दीजिए। गौर कीजिए कि अध्ययन-सत्र की समाप्ति के बाद ऋषि अपने विद्यार्थियों को किस प्रकार के निर्देश देते थे– 'सत्य बोलो। अपने कर्त्तव्यों का पालन करो। वेदों के अध्ययन, उनमें निहित ज्ञान एवं उनकी शिक्षा की अवहेलना मत करना। सत्य एवं कर्त्तव्य-मार्ग से विचलित मत होना। अपने कल्याण एवं समृद्धि की उपेक्षा मत करना। ईश्वर एवं पितरों के प्रति अपने कर्त्तव्य की अवहेलना मत करना। माता, पिता, गुरु एवं अतिथि को ईश्वर-सदृश समझो। दोषरहित कार्यों का ही सम्पादन करो, अन्य का नहीं।'

गुरुकुल के प्रत्येक विद्यार्थी को योग, आसन, प्राणायाम, मंत्र, नैतिक संहिता, गीता, रामायण, महाभारत एवं उपनिषदों का ज्ञान होता था। प्रत्येक विद्यार्थी नम्रता, आत्म-संयम, आज्ञा-पालन, सेवा-भाव, आत्म-त्याग, सद्व्यवहार, शिष्टता एवं भद्र स्वभाव जैसे गुणों से युक्त होता था। साथ ही सभी विद्यार्थी आत्म-ज्ञान प्राप्त करने की प्रबल इच्छा से युक्त होते थे। गुरुकुल का प्रत्येक विद्यार्थी निर्दोष, निर्मल एवं पवित्र होता था। उसे पूर्ण नैतिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। प्राचीन संस्कृति की यह प्रमुख विशेषता थी।

आज के विद्यार्थी

आज के विद्यार्थियों में इनमें से एक भी गुण नहीं पाया जाता। आत्म-संयम के बारे में उन्हें तनिक भी जानकारी नहीं है। वे बचपन से ही असंयत एवं विलासप्रिय हो जाते हैं। घमण्ड एवं अवज्ञा की जड़ें उनके व्यक्तित्व की गहराई में जमी हुई हैं। वे घोर भौतिकवादी एवं नास्तिक बन गए हैं तथा स्वयं को आस्तिक कहने में लज्जा का अनुभव करते हैं। उन्हें ब्रह्मचर्य एवं आत्मसंयम का कोई ज्ञान नहीं है। भड़कीले वस्त्र, अवांछित खान-पान, बुरी संगति, सिनेमा तथा पाश्चात्य रीति-रिवाजों एवं चाल-चलन को अपनाने के कारण वे वासनामय एवं कमजोर हो गए हैं।

हमारे महाविद्यालयों के विद्यार्थी अंधे अनुकरण के शिकार हो गए हैं। वे धूम्रपान करने, पतलून और जूते पहनने, बाल बढ़ाने तथा रुमाल में इत्र डालने जैसी चीजों में पश्चिम की नकल करते हैं। किन्तु उन्होंने उनके आत्म-त्याग, देश-भक्ति, सेवा-भाव, समय-पालन, अध्यवसाय, सहिष्णुता तथा विद्वत्ता जैसी श्रेष्ठ चारित्रिक विशेषताओं को नहीं अपनाया है। कुलीन परिवारों के कुछ युवाओं की स्थिति तो अत्यंत दयनीय एवं निराशाजनक है। वे सिनेमा देखने, ताश खेलने और मदिरापान में अपना समय बर्बाद करते हैं। धर्म और सदाचार का नाम सुनते ही उन्हें मिचली आने लगती है। वे धार्मिक प्रवृत्ति के विद्यार्थियों से घृणा करते हैं।

फैशन, अवांछित जीवन-शैली, भोगवाद, पेटूपन एवं विलासिता ने हमारे महाविद्यालयों के विद्यार्थियों को अपने वशीभूत कर लिया है। सम्पूर्ण भारत में विद्यार्थियों के स्वास्थ्य में गिरावट आई है। दूसरी तरफ स्वास्थ्य को नष्ट करने वाली बुरी आदतों में वृद्धि हो रही है। आधुनिक विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में नैतिक संस्कृति नाम की कोई चीज नहीं रह गयी है। आधुनिक सभ्यता ने हमारे लड़के-लड़कियों को दुर्बल बना दिया है। वे बनावटी जीवन जीते हैं। यह एक अति दु:खद, दयनीय स्थिति है। फैशन और स्वच्छता दो भिन्न चीजें हैं। फैशन की जड़ सांसारिकता एवं कामुकता में जमती है।

आध्यात्मिक आधार की आवश्यकता

शिक्षा एक ठोस जीवन-दर्शन पर आधारित होनी चाहिए। व्यक्ति को मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य की सही समझ होनी चाहिए। इस प्रकार की समझ के बिना शिक्षा की कोई योजना सन्तोषप्रद एवं लाभदायक नहीं होगी।

शिक्षा जीवन जीने का प्रशिक्षण है। इसमें नैतिकता की भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। नैतिक अनुशासन से रहित बौद्धिक शिक्षा मानव विकास के लिए हानिकारक है। चरित्र-रहित बौद्धिकता स्वयं व्यक्ति के लिए एवं उसके साथ रहने वाले लोगों के लिए भी खतरे का स्रोत है। नैतिक अनुशासन के बिना, केवल शरीर और बुद्धि के विकास से स्वार्थी स्त्री-पुरुष ही तैयार होंगे। उनके अन्दर गरीबों के प्रति सहानुभूति, बुजुर्गों एवं विद्वानों के प्रति सम्मान एवं जीवन के प्रति आदर का अभाव होगा। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो शुद्ध एवं सुन्दर चरित्र के निर्माण में सहायक हो। हमारी वर्त्तमान शिक्षा-पद्धति में ऐसा कुछ नहीं है जो हमारे तरुण लड़के-लड़कियों को सुदृढ़ चरित्र निर्माण का प्रशिक्षण दे सके।

यदि विद्यालयों एवं महाविद्यालयों से आध्यात्मिक शिक्षा को बाहर कर दिया जाएगा, तो हमारे भावी नागरिक अधार्मिक एवं नास्तिक हो जाएँगे। किसी विद्यार्थी को समुचित रूप से तब तक शिक्षित नहीं माना जा सकता जब तक वह आध्यात्मिक मूल्यांकन की सही समझ नहीं प्राप्त कर लेता। विश्वविद्यालयों के युवा स्त्री-पुरुषों को व्यावहारिक आध्यात्मिक जीवन का ठोस प्रशिक्षण मिलना चाहिए। मौलिक और महत्त्वपूर्ण होते हुए भी आज इसका पूर्ण अभाव है।

आज के विद्यालय-महाविद्यालय 'धर्मनिरपेक्ष शिक्षा' प्रदान करते हैं। वहाँ न तो नैतिक अनुशासन है, न ही आध्यात्मिक शिक्षण। बहुत-से विद्यार्थी केवल सैद्धान्तिक शिक्षा प्राप्त करते हैं। उनके सामने कोई आदर्श या उद्देश्य नहीं होता। यदि कोई उद्देश्य है भी, तो वह है जीविका हेतु नौकरी प्राप्त करना। वे केवल आय प्राप्त करने के लिए अध्ययन करते हैं। वे जो कुछ सीखते हैं, उसका लक्ष्य होता है अपनी आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति करना। यही कारण है कि आध्यात्मिक

दृष्टि से वे दीवालिया हो जाते हैं। आज हमारा युवा वर्ग नैतिक आचरण के प्रति लापरवाह है। वर्तमान पाठ्यक्रम में नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा का अभाव ही इसका कारण है। ऐसी शिक्षा से विद्यार्थी अनैतिक और उद्दण्ड ही बनेंगे।

प्रत्येक दिन अध्ययन के प्रारम्भ और अन्त में सामान्य प्रार्थनाओं, लघु ध्यान एवं सार्वभौमिक स्तोत्रों का पाठ होना चाहिए। विद्यार्थियों को प्रतिदिन शास्त्रों के ऐसे छोटे-छोटे उद्धरणों का पाठ करना चाहिए जो व्यापक, वैश्विक शिक्षा से युक्त हों। विभिन्न प्रकार के सद्गुणों के वर्णन से युक्त कहानियों की व्याख्या की जानी चाहिए। सन्तों, मनीषियों एवं पैगम्बरों के महान् जीवन की घटनाएँ उत्कृष्ट नैतिक शिक्षाओं से युक्त होती हैं। उनके अध्ययन से विद्यार्थी उदात्त एवं पवित्र भावनाओं से भर जाएँगे। दिव्य गुण उनके हृदय की गहराई में दृढ़ता से स्थापित हो जाएँगे।

शिक्षा पद्धति के दिशांतरण की आवश्यकता

आज भारत की शिक्षा-नीति अनिश्चितता के दौर से गुजर रही है। हमारे विद्यालय एवं विश्वविद्यालय लाभ-हानि को दृष्टि में रखकर संचालित किए जा रहे हैं। हमारे स्नातक रुपये-पैसे, सत्ता, सुविधा, सम्मान एवं उपाधियों के पीछे दौड़ रहे हैं। अवांछित साहित्य के प्रचार से हमारे युवाओं का मन प्रदूषित हो गया है।

आज शिक्षा का अवमूल्यन हो गया है। यह समग्र एवं सम्पूर्ण नहीं है। आज के विश्वविद्यालयों में विभिन्न विषयों का जो शिक्षण होता है, उसके समर्थन में समग्र शिक्षा का तर्क दिया जाता है, लेकिन यह तर्क कमजोर है। समग्र शिक्षा का उद्देश्य तो पूर्णता की प्राप्ति है, पर आज एम.ए. जैसी डिग्री का कोई मूल्य ही नहीं है। वास्तविक महत्त्व तो प्रज्ञा या विवेक का है। आदि शंकराचार्य किसी अकादमी या विश्वविद्यालय के स्नातक नहीं थे। उन्होंने तो अपने गुरु गोविन्दपाद तथा व्यास, वसिष्ठ, शुकदेव एवं पराशर जैसे पूर्ववर्ती मनीषियों की विद्या से ज्ञान-विज्ञान अर्जित किया।

वर्तमान भारतीय शिक्षा-पद्धति को सुधारने की आवश्यकता है। प्राचीन गुरुकुल पद्धति को पुनर्जीवित करके उसे आज के आवश्यकतानुसार ढालने की जरूरत है, ताकि विद्यार्थी उससे अधिकतम लाभ उठा सकें।

शिक्षा पर ही सभ्यता का उत्थान और पतन निर्भर रहता है। विश्वविद्यालय किसी भी राष्ट्र के चरित्र, सभ्यता एवं संस्कृति के रक्षक होते हैं। विश्वविद्यालय ऐसी संस्थाएँ कदापि न बनकर रह जाएँ जहाँ केवल रटकर ज्ञान प्राप्त किया जाए। उन्हें तो प्रकाश और प्रज्ञा का मन्दिर होना चाहिए।

कानूनी ताकत और राजकीय शक्ति की अपेक्षा सही शिक्षा-पद्धति से बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है। जब तक 'आन्तरिक मनुष्य' की शिक्षा नहीं होती, कानून मृत अक्षर ही बना रहेगा। यदि हम 'आन्तरिक मनुष्य' को शिक्षित कर सकें तो यह न केवल व्यक्ति की, बल्कि राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व की महान् सेवा होगी।

बच्चों की परवरिश

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

माँ-बाप अपने बच्चों से बहुत उम्मीदें, बहुत महत्त्वाकांक्षाएँ रखते हैं। उन्हें अपनी ही तरह ढालना चाहते हैं, लेकिन वे एक बात भूल जाते हैं। जैसे यह मकान एक मुसलमान ने बनाया है, पर इसमें मुसलमान नहीं रहता है, रहने वाला साधु है, पक्का हिन्दू, उसी तरह यह जरूरी नहीं कि किसी बनिये या ब्राह्मण के बेटे में वैश्य या ब्राह्मण ही हो। और कोई भी हो सकता है। हो सकता है विलायत के किसी राजपरिवार के लड़के की आत्मा वहाँ आ गई हो। आत्मा एक जन्म से दूसरे जन्म में जाती है, मूल तत्त्व यह है।

बेटे या बेटी का जो शरीर है, उसका मूल बीज पिता का वीर्य होता है और उसका कच्चा माल माँ के शरीर में दो सौ सत्तर दिन मिलता है। माँ ने कच्चा माल दिया है, उत्पादन करने के लिए वह कारखाना बनी, और उसका डिज़ाइन दिया है बाप ने। नौ महीने में तैयार माल निकल गया, परन्तु माल के अंदर जो जीव है, वह कौन है? वह न तो बाप है, न माँ। वह तो किसी ईसाई, मुसलमान, अंग्रेज, शूद्र, ब्राह्मण, राजा या किसी बड़े नेता की आत्मा हो सकती है।

कोई भी जीवात्मा हो, उसके आवागमन का एक नियम होता है। ऐसा नहीं कि कोई भी आकर माँ के पेट में घुस जाएगा। कर्म का एक नियम होता है। जब संसद में शपथग्रहण होता है, वहाँ सब नहीं जा सकते। जिसको बुलाया जाता है, वही प्रवेश कर सकता है। सेना में, अस्पताल में, न्यायपालिका में, हर जगह एक नियम होता है। वैसे ही प्रकृति के नियम हैं कि कौन जीव किसके अंदर और क्यों जाएगा।

कोई जीवात्मा तुम्हारे अंदर में आ गई है, यह पहली बात तुम याद रखो। अब अगर वह ऐसा जीव निकला जो पूर्व जन्म में कोई साधु-महात्मा था, पर कहीं पर कुछ विचलित हो गया था, तब तो उसको फिर बुद्ध बनने से तुम रोक नहीं सकते। न ही विवेकानन्द, क्राइस्ट या सत्यानन्द बनने से रोक सकते हो, चाहे तुम उसको मारो-पीटो या चूमो-चाटो। वह तो अपने कर्म को लेकर ही जाएगा, चाहे तुम रोओ, चाहे चिल्लाओ। और यदि उसको चोर-डाकू बनना है, लम्पट बनना है,

तो तुम कितना ही उसको साधु-संतों की संगत में डालो, आश्रम में ले जाओ, दीक्षा दिलाओ, उसको तो रावण ही बनना है। उसको तुम रोक नहीं सकोगे, क्योंकि वह उस संस्कार को लेकर आया है और उसको पूरा करेगा। इसका मतलब यह है कि तुम्हें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है। जो भी आया, वह तुम्हारे सामर्थ्य के बाहर था, तुम कुछ नहीं कर सके।

अब वह पैदा हो गया है तो वह जिस तरह से जीना चाहेगा, जीयेगा, तुम कुछ नहीं कर सकते हो। जब तक वह इतना छोटा है कि दौड़-भाग नहीं कर सकता, इधर से उधर जा नहीं सकता, कमा नहीं सकता, तब तक तुम्हारे अधीन है। पर वह तुम्हारे नियंत्रण में नहीं है। एक बहुत बड़े कवि, खलील जिब्रान ने एक पुस्तक लिखी है, 'प्रोफेट'। कभी समय मिले तो पढ़ लेना। उसकी अंतिम कविता है बच्चों पर। माना कि यह बच्चा तुमने पैदा किया है, मगर यह तुम्हारा नहीं है। यह एक दूसरी आत्मा है, जो तुम्हारे घर में आई है।

माता-पिता का यह कर्तव्य होता है कि जब तक बच्चा छोटा है, उसे ठीक से खाना खिलाओ और आज की परिस्थितियों के अनुसार समाज तुमसे जैसा चाहता है, उस तरह से उसको रखो। अगर समाज कहता है कि छोटे बच्चे को नंगा मत रखो, तो उसे चड्डी पहना दो, बाल बना दो। उतना तुमको करना पड़ेगा। मगर जहाँ तक चिन्ता की बात है, तुम्हें एकदम निश्चिन्त होकर रहना चाहिए। बच्चे को अपने जीवन की दिशा खुद तय करनी है। बच्चे को खिलाओ, पिलाओ, कपड़ा पहनाओ, दस-पन्द्रह साल उसकी रक्षा करो। उसके बाद बच्चा खेलना चाहे, खेलने दो; नाचना चाहे, नाचने दो; मॉडल बनना चाहे, मॉडल बनने दो। केवल पढ़ेगा और आई.पी.एस., आई.ए.एस. बनेगा, यह गलत धारणा है। केवल व्यापार करेगा या इण्डियन स्कूल ऑफ मैनेजमेंट में नब्बे प्रतिशत लेकर किसी बहुत बड़ी कम्पनी का मैनेजर बनेगा, यह गलत विचार है।

हमारे जमाने में माँ-बाप बोलते थे–पढ़ोगे-लिखोगे बनोगे नवाब, खेलोगे-कूदोगे बनोगे खराब। क्या उल्टी बात सिखाई? हम तो सिखाते हैं–खेलोगे-कूदोगे बनोगे नवाब, पढ़ोगे-लिखोगे बनोगे खराब! बच्चों के बारे में बहुत ज्यादा चिन्ता मत करो। हमारे समय में भी बच्चे ऐसे ही थे, किन्तु उन्हें सिर उठाने का मौका नहीं मिलता था, क्योंकि वे घर के बाहर नहीं निकल पाते थे। लड़कियों के लिए तो और भी मुश्किल था। अब तो लड़कियाँ भी खट्-खट् बात करती हैं, और ऐसा होना भी चाहिए।

माँ-बाप बहुत बिगड़ गए हैं। इतने बिगड़ गए हैं कि अपने बच्चे को अपनी कार्बन-कॉपी बनाना चाहते हैं। जितने माँ-बाप हैं, ध्यान से सुनना। अगर तुम्हारा बेटा तुम्हारे माफिक बनेगा, तो भविष्यकाल में भूतकाल के भूत को ले जाएगा। बच्चों को भूतकाल के साथ जोड़ो ही मत। भविष्य की, आने वाले युग की एक

संस्कृति है। जिसको कल तक गलत कहा जा रहा था, परसों बहुत खराब कहा जाता था, नरसों तो उसको बिल्कुल कुछ और ही कहा जा रहा था, आज लोग कहते हैं, 'लगता है अच्छा है।'

कुछ देश दुनिया में ऐसे हैं, जिन्होंने उदाहरण प्रस्तुत किए हैं कि बच्चों को, खास तौर से लड़कियों को कैसा होना चाहिए। मैं लड़की शब्द का प्रयोग कर रहा हूँ। यद्यपि बोलना चाहिए बच्चे, क्योंकि बच्चे दोनों का प्रतिनिधित्व करते हैं, पर मुझे अब यह शब्द भारत में इस्तेमाल करना पड़ता है, क्योंकि यहाँ लड़के और लड़कियाँ, दो अलग सामाजिक वर्ग हैं। दोनों के अधिकार क्षेत्र अलग हैं। दोनों के कानूनी क्षेत्र अलग हैं। दोनों के सम्पत्ति के अधिकार अलग हैं। दोनों के सामाजिक-धार्मिक मूल्य अलग-अलग हैं। और यह इस देश का दुर्भाग्य है। इसी वजह से हमारे देश में गरीबी है। इसी वजह से हमारा देश दुनिया में बहुत पिछड़ा हुआ गिना जाता है। इसी वजह से हमारे देश में माता-पिता समय के पहले अपने बच्चों की चिन्ता में वृद्ध हो जाते हैं।

लालयेत् पंचवर्षाणि दशवर्षाणि ताडयेत्।
प्राप्तेषु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रमिवाचरेत्॥

बच्चों के माता-पिता को चौदह-पन्द्रह साल के बाद उनके बारे में चिन्ता करनी ही नहीं चाहिए, ऐसा समाज बनाओ। लड़की की चिन्ता में बाप दूसरे आदमी के सामने अपनी पगड़ी उतारकर रख देता है और कहता है कि डेढ़ लाख रुपये ले लो, इसको ले जाओ। यह कोई समाज है? यह कैसा सामाजिक दर्शन है! क्या समाज को बनाने वाला और कर्त्ता-धर्त्ता केवल मर्द होता है? नहीं, गलत बात है। यह तभी बदल सकता है जब इन बच्चों पर तुम्हारा अंकुश न लगे। इन्हें स्वतंत्र जीवन जीने दो।

तुम इन्हें आखिर वही बनाना चाहते हो जिसे तुम ठीक समझते हो, लेकिन जो तुम समझते हो, वह ठीक नहीं भी हो सकता है। आजकल पढ़े-लिखे लोग, बड़े-बड़े घर के लोग अपनी लड़कियों को मॉडल बनाकर भेजते हैं, जिसे आज से बीस साल पहले महागलत माना जाता था। बड़े-बड़े लोगों से मेरा मतलब उन लोगों से है जो समाज में कुछ रुतबा, कुछ प्रतिष्ठा रखते हैं और आज वे लोग मीडिया में पैसा देकर अपनी लड़कियों को मॉडलिंग में भेजते हैं, फिल्म लाइन में भेजते हैं, म्यूज़िक लाइन में रखते हैं।

स्वतंत्र व्यक्ति के लिए जीवन खुला मैदान है। आज़ाद लड़का जो चाहे वह करे। चौदह साल के बाद अपने लड़के-लड़कियों से बोलो, 'बेटा, अब तुम्हारे पास चार साल और बचे हैं। इस बीच में तुम अपने खाने, पीने, रहने और नौकरी का इंतजाम कर लो। अट्ठारह साल के बाद हम तुम्हें पैसा नहीं देंगे। उसके बाद

बी.ए., एम.ए., एल.एल.बी., सब तुम अपने-आप करो।' चौदह साल में लड़के-लड़की को नोटिस मिल जाना चाहिए कि माँ-बाप अट्ठारह साल के बाद आर्थिक सहारा नहीं देने वाले हैं।

जिन देशों में यह प्रथा आई है, वे देश तुम पर राज कर रहे हैं। उनकी लड़कियाँ कहीं भी चली जाती हैं। तुम्हारे यहाँ कोई लड़की है क्या ऐसी? उसे तो कुछ मालूम ही नहीं है। उसके लिए तो रसोईघर के बाहर की दुनिया एकदम अंधकारमय है। उसे तो मर्दों के सामने जवाब देने में डर लगता है। इसलिए कहता हूँ कि बच्चों के साथ बहुत होशियारी से व्यवहार करो। ज्यादा चिन्ता मत करो। अपना समय कुछ अच्छी किताबें पढ़ने में लगाओ, बच्चों को भी किताबें पढ़ाओ। हम यह नहीं कहते कि बच्चों की सेवा मत करो, पर बच्चों को हर समय मत कहो, 'यह मत करो, वह मत करो।' रोज सवेरे उठकर माँ पूछती है, 'ब्रश कर लिया क्या? नाश्ते का समय हो गया है, जल्दी आओ।' अरे! उसको नाश्ता करना है तो वह खुद आएगा।

तुम्हें एक छोटी-सी कहानी बतलाते हैं। स्वामी सत्संगी को हम बचपन से जानते हैं। यह भी रोज इसी बात से परेशान हो गई। रोज माँ बोलती, 'टूथपेस्ट का ढक्कन बंद करना नहीं आया अभी तक।' यह खोलकर छोड़ देती थी। जब यह आश्रम में आती थी, हम इससे कभी कुछ पूछते ही नहीं थे। कभी नहीं। इसे आश्रम बहुत अच्छा लगा। कम-से-कम यहाँ तो परेशानी नहीं है। इसने आश्रम में बराबर आना चालू कर दिया। और पढ़ाई भी अच्छी हुई। इसने बी.ए. पास किया और उसके बाद बहुत अच्छी नौकरी की।

इसको एक ही साथ ग्यारह जगह से नियुक्ति पत्र आए। मुझसे पूछा, 'मैं क्या करूँ?' मैंने कहा, 'सबसे बढ़िया चीज है कि तुम कोई ऐसा काम करो जिससे सारी दुनिया घूम सको।' तकदीर देखो। इसने एयर इण्डिया में नौकरी ली और सारी दुनिया घूमी। दुनिया में कोई जगह नहीं है जहाँ यह रही नहीं है। आइसलैण्ड से अलास्का, जापान और चीन, सब जगहें देखीं। हमने उस नौकरी का चुनाव किया था। हमने कहा—दुनिया देखो, अकेले रहो। माँ-बाप तो निमित्त हैं। माँ-बाप सच्चाई नहीं हैं, सच्चाई तो केवल तुम हो। तुम अपने को सच्चाई समझकर रहो, सबके साथ रहो।

यहाँ भी हम यही कहते हैं कि किसी को ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं है। अगर ये स्वयं अपने जिम्मेदार नहीं बनते हैं, तो हम इनको 'जिम्मेदार बनो, जिम्मेदार बनो' कहकर जिम्मेदार नहीं बना सकते। बच्चे बड़े बनने का सपना लेकर अपने आप महान् बनें। हाँ, उसके लिए अगर वे मदद माँगें कि 'मम्मी! मुझे वहाँ जाना है, पैसे की जरूरत है' तो बहुत अच्छा है। पैसे दे दो। तुम्हें मना नहीं करना है। लेकिन अब तुम चाहो कि वे बड़े बनें और पूरे का पूरा डिज़ाइन भी तुम ही तैयार करो, नहीं। माँ-बाप बच्चे के जीवन का डिज़ाइन तैयार नहीं कर सकते हैं। बच्चे का कर्म उसके जीवन का डिज़ाइन तैयार करेगा। ऐसा जमाना आने वाला है, लड़के-लड़कियों, दोनों के लिए।

अगर पढ़ने में बच्चों का मन नहीं लगे, तो उन्हें संगीत सिखलाओ, नृत्य सिखाओ, अभिनय की क्लास में भेजो। ऐसा तो नहीं हो सकता कि उनका कहीं मन नहीं लगेगा। पता लगाओ कि तुम्हारी बच्ची के लिए क्या उपयुक्त है, उसका मूल संस्कार क्या है? हो सकता है उसका मूल संस्कार नर्तकी का हो या संगीतज्ञ का हो या चित्रकारी करने का हो। समझो कि उसका मूल संस्कार कुछ भी हो सकता है। यह बात समझना बहुत जरूरी है। हर व्यक्ति के अंदर एक अलग स्वतंत्र प्रतिभा होती है। वह उसका मूल गुण है। उस प्रतिभा को खोजना पड़ता है। वह प्रतिभा उस बच्चे में गुप्त होती है, जैसे हर बीज में एक वृक्ष छिपा होता है। वह वृक्ष क्या है, कब लगता है, कितना पानी चाहिए, कौन-सी खाद चाहिए, कौन-सी जमीन चाहिए, यह सब जानना पड़ता है। इसलिए बच्चों को केवल ए-बी-सी-डी, मिडिल और मैट्रिक के भरोसे नहीं ले जाना चाहिए। वह तो मात्र साक्षरता है।

हमने भी पढ़ा कि औरंगजेब की कितनी बेटियाँ थीं। आज तो मेरे काम में कुछ भी नहीं आ रहा है, न चन्द्रगुप्त, न विक्रमादित्य, न अशोक, न औरंगजेब। आज मेरे काम एक ही चीज आ रही है और वह है यह ज्ञान कि अपने स्तर और अवस्था के अनुरूप मुझे कैसे जीना है। मैं संन्यासी हूँ, मुझे कैसे रहना है? मेरा आश्रम है, कैसे चलाना है? मैं अस्सी साल का हूँ, मुझे क्या करना है, क्या नहीं, यही काम आया। साक्षरता से मुझे कोई मदद नहीं मिली।

तुम अपने बच्चे की प्रतिभा को देखो, उसके साथ हस्तक्षेप मत करो। अगर बच्चों का पढ़ने में मन नहीं लगता है तो नहीं लगता है। उसका हुनर पता लगाओ, उसे संगीत की कक्षा में भेज दो। अगर उसका आश्रम में आने को मन करता है तो आश्रम आयेगी। अगर खिलौना खेलना है तो खेलेगी। बच्चों की तो उम्र ही होती है खेलने और खाने की।

बच्चों के साथ सही व्यवहार करना और उनके विकास में मददगार होना बहुत कठिन काम है। माँ बनना बहुत सरल है, पर बच्चे का शिल्पी बनना बहुत मुश्किल। इसके लिए तुम्हें बच्चों को अपने से अलग समझना पड़ेगा। आसक्ति नहीं होनी

चाहिए बच्चों के प्रति। बच्चे जितना दूर रहें उतना अच्छा है। माता-पिता की छाया बच्चों पर ज्यादा न पड़े तो अच्छा है, क्योंकि तुम लोग जिस समय के हो, वह अब पुराना हो गया है। यह पीढ़ी अब दूसरी है। जिस पीढ़ी का ये प्रतिनिधित्व करते हैं, वह अभी दस साल में बहुत बदलेगी। पिछले बीस सालों में इस पीढ़ी में जो परिवर्तन आ रहा है, एकदम जबर्दस्त है; कुछ कह नहीं सकते किस ओर ले जाएगा। और हिन्दुस्तान तो अब तक सोया हुआ देश था, उसने अभी करवट ली है।

अगर हिन्दुस्तान उठेगा तो यह न तो चीन के रास्ते जाएगा और न ही मध्य एशिया के रास्ते पर। यह पश्चिम के रास्ते जाएगा। आजकल तुम लोग अलग-अलग धर्म, अलग-अलग जाति मानते हो, मगर तुम लोगों का जो मूल है, वह एक ऐसी संस्कृति में है जो पश्चिम से अधिक निकट है। तुम लोग हिन्दी बाएँ से दाएँ लिखते हो। अंग्रेजी और फ्रेंच भी बाएँ से दाएँ लिखी जाती हैं। पर चीनी तो बाएँ से दाएँ नहीं लिखी जाती। फारसी, अरबी और हिब्रू भी बाएँ से दाएँ नहीं लिखी जाती हैं। संस्कृत भाषा सभी यूरोपीय भाषाओं की जननी है। वहाँ तुम्हें हजारों शब्द मिलेंगे जो यहाँ से आए हैं। संस्कृति के प्रति भारत के लोगों का सहज झुकाव रहा है, और यह झुकाव बतलाता है कि अगले दस-बीस साल में भारत के बच्चे और बच्चियाँ उसी तरफ जाएँगे, जिस तरफ आज अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्राँस, जर्मनी आदि गए हुए हैं। यही रास्ता इन सबके सामने है। चीन, अरब या फारस उदाहरण नहीं हैं।

हिन्दुस्तान में बद्रीनाथ से कन्याकुमारी तक जितने भी आश्रम हैं, उनमें जितने पाश्चात्य लोग आते हैं, उतने अन्य लोग नहीं आते। क्यों? अपनापन महसूस होता है विचारों में। यद्यपि उनका धर्म दूसरा है, फिर भी हमारे आध्यात्मिक विचारों को वे सहज स्वीकार लेते हैं।

हमारा धर्म इतना साधारण नहीं है कि संस्कृति, समाज या सरकार के बदल जाने से बदल जाएगा। यह बहुत लचीला है। आदमी मोटा हो जाए, तब भी वही कपड़ा काम करता है; पतला रहे, तब भी वही काम करता है। आपके धर्म में जो लचीलापन है, उसकी वजह से कल की पीढ़ी के लोग एकदम अमेरिकन भी बन जाएँ तो भी फिट रहेंगे। हम लोगों के धर्म पर समाज और संस्कृति का असर बिल्कुल नहीं होता है। हजारों साल से हमने देखा है, बिल्कुल असर नहीं हो सकता है।

हम बोलते हैं, धर्म तो भगवान की चीज है, उसका शादी-ब्याह से क्या मतलब है। तुम्हारा लड़का या लड़की शादी करके तलाक देती है, करने दो। इससे हमारा सनातन धर्म बदलने वाला नहीं है। इसलिए उनको आराम के साथ, जैसे पढ़ना चाहें, पढ़ने दो। जमाना इनके लिए खुला है। बस, तुम लोगों को इनके लिए ज्यादा चुनाव या निर्णय नहीं करना चाहिए, केवल मदद करनी चाहिए।

–9 मई 2004, रिखियापीठ

आत्माभिमुख शिक्षा

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

सन् 1977 में पेरिस, फ्रांस के एक विद्यालय से हमारे आश्रम को एक पत्र आया। उस पत्र में लिखा था कि 'योग के बारे में हम लोग हमेशा सुनते आये हैं कि यह मानव प्रतिभा का विकास कर सकता है, मानवीय चंचलता को समाप्त कर सकता है, शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति प्रदान कर सकता है। हम लोगों की इच्छा है कि आप हमारे विद्यालय में आकर योग की शिक्षा विद्यार्थियों को दें, क्योंकि हमारे विद्यालय के विद्यार्थी बहुत चंचल, उद्दण्ड, व्यसनी और अपराधी हैं। हम देखना चाहते हैं कि योग के द्वारा इनके जीवन में किसी प्रकार का परिवर्तन लाया जा सकता है या नहीं।'

यहाँ से एक शिक्षक गये और उन्होंने उस विद्यालय के मनोवैज्ञानिकों, विद्यार्थियों के अभिभावकों तथा शिक्षकों से बातचीत की। एक कार्यक्रम बनाया गया, जिसमें योग की शिक्षा विद्यार्थियों को नहीं, बल्कि सर्वप्रथम प्रोफेसरों और शिक्षकों को दी गई। वे प्रोफेसर और शिक्षक फिर अपने-अपने विद्यार्थियों को कक्षा के वातावरण में योग की शिक्षा देने लगे। एक आसन, एक प्राणायाम, इससे अधिक नहीं। विद्यार्थियों को शिक्षा देने का यह कार्यक्रम छः महीने तक चला। आपको मालूम होगा कि पाश्चात्य देशों में हर स्कूल-कॉलेज में सरकार द्वारा नियुक्त मनोवैज्ञानिक होते हैं, जो प्रत्येक विद्यार्थी की मनोवैज्ञानिक रूपरेखा देखते हैं, किसको किस प्रकार की समस्या है। प्रत्येक विद्यार्थी का हर प्रकार का इतिहास उन लोगों के पास रहता है, और उसी के आधार पर उन्हें शिक्षा दी जाती है।

छः महीने के योगाभ्यास के पश्चात् जब पुनः विद्यार्थियों के आचरण, व्यवहार, एकाग्रता, स्मरण-शक्ति और ग्रहणशीलता को देखा गया, तो बहुत अंतर पाया गया। जो विद्यार्थी पहले व्यसनी थे, व्यसन छोड़ने लगे, धीरे-धीरे स्वेच्छा से, किसी के कहने से नहीं। जो विद्यार्थी चंचल थे, धीरे-धीरे शान्त और एकाग्र होने लगे, स्वाभाविक रूप से, किसी के कहने से नहीं। इस प्रकार विद्यार्थियों के जीवन में, उनके व्यवहार और आचरण में एक गुणात्मक परिवर्तन दिखलाई देने लगा।

इन परिणामों को देखते हुए फ्रांस की सरकार ने एक साल के बाद, सन् 1978 में हम लोगों से अनुरोध किया था कि आप सभी स्कूलों में योग की शिक्षा दीजिए; हम आपको सरकार की ओर से पूरी छूट देते हैं। तो हम लोगों ने एक मार्ग अपनाया–पहले सभी शिक्षकों को योग की शिक्षा प्रदान करना। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 1982 तक पहुँचते-पहुँचते केवल पश्चिमी यूरोप में लगभग सत्तर हजार शिक्षकों ने योग का प्रशिक्षण प्राप्त किया और विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में वे योग की शिक्षा देते रहे।

यह कार्यक्रम फ्रांस में ही नहीं, बल्कि इंग्लैण्ड, जर्मनी, स्पेन, कैनेडा और अमेरिका के स्कूलों में भी चलाया गया। पेरिस में यूनेस्को द्वारा एक विशेष सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसका विषय था–'आधुनिक शिक्षा नीति में योग की भूमिका।' इस प्रकार शिक्षा जगत् में आज योग एक आन्दोलन का रूप ले चुका है।

यह उदाहरण महत्त्वपूर्ण है जिसमें बहुत-से बिन्दु दिखलाई देते हैं। एक बिन्दु है समाज, दूसरा है शिक्षा, तीसरा है शिक्षक एवं अभिभावक और चौथा है विद्यार्थी। अब एक-एक करके हम इन चारों को देखते हैं, और अंत में योग को इनके परिप्रेक्ष्य में देखेंगे।

संस्कार रहित समाज

केवल भारतीय समाज ही नहीं, पूरा विश्व-समाज आज एक ऐसे चौराहे पर खड़ा है, जहाँ एक ओर मनुष्यों के लिए भौतिकता का आकर्षण है, और दूसरी ओर उनका व्यक्तिगत जीवन है। यह तो सब कहते हैं कि मनुष्य ही समाज का निर्माण करता है, लेकिन जब हम आधुनिक मनुष्य को देखते हैं तो उसमें समाज-रचना की क्षमता दिखलाई नहीं देती। लोगों के जीवन में असंतुलन, अशान्ति और वैचारिक अस्पष्टता दिखलाई देती है। जब इस प्रकार का असंतुलन हम लोगों के जीवन में है, और इस असंतुलन के कारण हम लोग सही रूप से अपनी मानवीय प्रतिभा का उपयोग नहीं कर पाते हैं, तो किस प्रकार हम समाज-निर्माण में अपना सहयोग दे पायेंगे? जो व्यक्ति अविवेकी है, दुराचारी है, अच्छाई और बुराई को समझते हुए भी अपने स्वार्थ के लिये गलत काम करता है, उस व्यक्ति से हम यह अपेक्षा कैसे करें कि वह हमारे समाज का निर्माण करेगा?

आज जो सामाजिक परिस्थिति है, उसका दोष हम चाहे किसी को भी दें, पर उसके वास्तविक निर्माता हम खुद हैं। हमारे जीवन में संस्कारों का अभाव है। आज जिस समाज का निर्माण हो रहा है, वह संस्कार रहित समाज है। भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में जहाँ भी आप जायें, आपको संस्कार दिखलाई नहीं देंगे। कम-से-कम हम भारतीय लोग तो इतना स्वीकार कर सकते हैं कि हमारे जीवन में विकास की प्रक्रिया संस्कारों से ही शुरू होती है जो हमें मिलते हैं अपने अभिभावकों से, अपने माता-पिता से। संस्कारों के माध्यम से हमें चारित्रिक, नैतिक, सामाजिक, सभी प्रकार की शिक्षाओं को प्राप्त करने का आधार मिलता है। समाज में आज जो अव्यवस्था फैली है, इसके दोषी हम खुद हैं। हमने खुद संस्कार ग्रहण नहीं किये और अगर किये भी, तो उन्हें अनदेखा कर दिया, और दूसरों को उन संस्कारों की शिक्षा नहीं दे पाये।

अब इस परिवेश में शिक्षा का योगदान कहाँ तक हो सकता है? आज जो शिक्षा हम लोगों को मिल रही है, उसको हम लोगों ने एक नाम दिया है, 'जीविकाभिमुख शिक्षा'। अगर हम चाहते हैं कि हमारा बेटा डॉक्टर बने, तो बचपन से ही उसे उस लाइन में ले जाते हैं। उसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित करते हैं, जो भविष्य में उसे एक नौकरी दिला सके, क्योंकि हम लोगों की मान्यता हो गई है कि जब नौकरी रहेगी, तभी जीवन में सम्पन्नता और सुख भी रहेगा। ठीक है, भौतिकवाद के दृष्टिकोण से यह उचित है, लेकिन व्यक्तित्व के आधार पर यह गलत है, क्योंकि इस प्रकार की शिक्षा में हम मानवीय मूल्यों को ग्रहण नहीं कर पाते हैं। जिस अनुशासन की शिक्षा हमें मिलनी चाहिए, वह मिलती नहीं है।

हम तो आज यही कहेंगे कि अगर हमें किसी प्रकार की शिक्षा चाहिए, तो जीविकाभिमुख शिक्षा नहीं, बल्कि आत्माभिमुख शिक्षा चाहिए। यह आत्माभिमुख शिक्षा मनुष्य के बाह्य कर्म पर आधारित नहीं रहती। यह मनुष्य की प्रतिभा, बुद्धि, भावना और क्षमता को विकसित करती है। अगर आप अपनी बौद्धिक क्षमता, भावनात्मक क्षमता और कार्य क्षमता को विकसित कर सकते हैं, तो निस्संदेह आप प्रतिभाशाली व्यक्ति बन सकते हैं। शिक्षा का यही स्वरूप होना चाहिए।

शिक्षकों और अभिभावकों की भूमिका

यहाँ पर अब एक बात आती है कि किस प्रकार हम भौतिक तथा व्यक्तिगत शिक्षा पद्धति को एक साथ जोड़ सकें, किस प्रकार शिक्षा में इन दोनों का समावेश हो सके। इसका उपाय है, लेकिन यह उपाय विद्यालय की कक्षा तक ही सीमित नहीं रहता। इस उपाय को लागू करने के लिये, इसके परिणाम प्राप्त करने के लिये जितना प्रयत्न शिक्षक को करना होता है, उतना ही अभिभावक को भी करना होता है। शिक्षक तो शिक्षा दे सकता है, लेकिन अभिभावक को जमीन तैयार करनी

पड़ती है। विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना पड़ता है कि वे उस शिक्षा पर अमल करें। जो बातें बतलाई गई हैं, उन्हें अपने जीवन में अनुभव करें।

केवल बुद्धि-विकास नहीं, अनुभव को भी प्राप्त करना आवश्यक है। इसलिये शिक्षक और अभिभावक, इन दोनों की भूमिका यहाँ पर महत्त्वपूर्ण है। अगर ये दोनों मिलकर अपनी भूमिका अदा नहीं कर सकते तो विद्यार्थियों का विकास नहीं होगा। इसका स्पष्ट उदाहरण आज हमारे सामने है। आज चारों तरफ त्राहि-त्राहि मची है कि कोई अच्छा स्कूल नहीं है, और सब चाहते हैं कि हम अपनी संतान को एक अच्छे स्कूल में भेजें। स्कूल में उसे शिक्षा तो मिल जायेगी, लेकिन जब तक आप घर में बच्चों को सहारा नहीं देंगे, उनका सही विकास नहीं हो पायेगा। आप कहेंगे, 'इतने अच्छे स्कूल में जाता है, फिर भी इसका चाल-चलन, आदतें और व्यवहार बिगड़ा हुआ है' और दोषी हम बनाते हैं शिक्षा और शिक्षक को।

दोष न शिक्षा का है, न शिक्षक का। दोष है अभिभावकों का, जो अपने बच्चों को सही सलाह, प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन देने में सक्षम नहीं हैं। अगर बच्चों को यह सहारा मिलता है, तो वे निश्चित रूप से प्रतिभा-सम्पन्न विद्यार्थी बनेंगे।

विद्यार्थियों की मानसिकता

चौथे बिन्दु के रूप में अब आते हैं विद्यार्थियों पर। जब फ्रांस में यह प्रयोग किया जा रहा था और प्रत्येक विद्यार्थी की मनोवैज्ञानिक रूपरेखा को देखा जा रहा था, तो उसमें जो आँकड़े प्राप्त हुए उनकी एक झलक मैं आपको देता हूँ। जिन घरों में पारिवारिक असंतोष था, माता-पिता का सम्बन्ध-विच्छेद हुआ था, उन घरों के बच्चे अपराधी थे। वे प्राय: व्यसनी भी थे, शराब, गाँजा, चरस पीने वाले। माता-पिता

अलग हो गये, बच्चा बेचारा बीच में पड़ा है। वह न तो इनकी बात समझ पाता है, न उनकी। अब बेचारा बच्चा अपनी भावनात्मक आवश्यकता की पूर्ति किस प्रकार करे? अचेतन तनाव तो उसके मन में उत्पन्न हो रहा है, जिसे वह व्यक्त नहीं कर पाता है, समझ नहीं पाता है।

ऐसे बच्चे, जिनके माता-पिता का तलाक हुआ था, व्यसनी थे। जिस घर में असंतोष था, लड़ाई-झगड़ा होता था, वहाँ के बच्चे अपराधी थे। किसी का कुछ उठा लिया, चोरी कर ली, झूठ बोल दिया। बाद में किसी की जेब काट ली, किसी की गाड़ी चुरा ली। एक और बात, जिस परिवार में अपनी संतान से ज्यादा अपेक्षाएँ थीं कि बड़ा होकर यह नाम कमायेगा, और बार-बार पढ़ाई के लिये जोर दिया जाता था, वैसे बच्चों की प्रतिभा कम थी। वे मेधावी नहीं थे। उन्हें अपनी प्रतिभा के विकास के लिये समय नहीं मिलता था। हमेशा दबाव रहता था कि तुम्हें यह करना है। तुम पढ़ाई करो, खेलो मत।

मनोविज्ञान तो स्पष्ट रूप से मानता है कि तनाव या परेशानी हर व्यक्ति को प्रभावित करती है। विद्यार्थी-जीवन के दौर से गुजर रहे बच्चों को यह तनाव सबसे अधिक प्रभावित करता है, और उनके लिये घातक है, क्योंकि वे उसे समझ नहीं पाते और वह उनके अचेतन में प्रवेश करता है।

ऐसे विद्यार्थियों के सम्बन्ध में वहाँ के मनोवैज्ञानिकों ने एक काम किया। उन्होंने कहा कि अगर विद्यार्थी दो घण्टे लगातार पढ़ाई करते हैं, तो आधे घण्टे का अवकाश उन्हें मिलना चाहिए जिस समय वे अपने को तनावमुक्त करने के लिए स्वेच्छा से कुछ करें—सो जायें, खेले-कूदें, भागे-दौड़ें, कुछ हँसी-मजाक करें, टेलिविजन देखें, फिल्म देखें, लेकिन अपने मस्तिष्क को पढ़ाई से हटा लें। इस प्रकार उन्होंने एक कार्यक्रम बनाया कि हर दो घण्टे के बाद विद्यार्थियों की सजगता में एक परिवर्तन हो। उसके बाद फिर दो घण्टे पढ़ें। इस प्रकार जब विद्यार्थियों के तनावों को दूर करने का प्रयास किया गया तो उनकी ग्रहणशीलता, उनकी स्मृति और भी बढ़ी।

योग के सकारात्मक प्रभाव

अब यहाँ पर योग की बात आती है। इस संदर्भ में आप इस बात को ध्यान में रखें कि योग किसी दर्शन या धर्म का अंग नहीं है। हम इसे कोई सिद्धान्त या साधना भी नहीं कहेंगे आप लोगों के सामने। हम कहेंगे, यह एक शिक्षा है। किस प्रकार की शिक्षा?

अगर आप प्रारम्भिक योग शास्त्रों को देखें, तो आपको दो चीजें दिखलाई देंगी। योग सूत्रों में महर्षि पतंजलि ने कहा है *'अथ योगानुशासनम्'*—योग एक अनुशासन है। जब महर्षि पतंजलि से फिर पूछा जाता है कि इस अनुशासन,

संतुलन तथा व्यक्तित्व के सामंजस्य को प्राप्त करने से क्या होगा तो वे कहते हैं, *'योग: चित्तवृत्तिनिरोध:'*, अर्थात् इस प्रकार के अनुशासन को जब सिद्ध कर लोगे, तब चित्त की वृत्तियों का निरोध होगा। यहाँ पर शब्द आया है 'चित्तवृत्ति'। यह चित्तवृत्ति है क्या? हमारे मानसिक क्षेत्र में जो क्रियाएँ, प्रतिक्रियाएँ, परिवर्तन, इच्छा, अनिच्छा, राग-द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह, घमण्ड आदि विभिन्न प्रकार के अनुभव उत्पन्न होते हैं, उन्हें कहा जाता है चित्तवृत्ति।

जब सागर में हलचल नहीं रहती, तब उसे शान्त सागर कहा जाता है। जब मन शान्त रहता है तो उसे कहा जाता है 'चित्त'। जब सागर में हलचल उत्पन्न होती है और अपने प्रवाह में किसी को भी घसीट लेती है, तब उस हलचल को कहते हैं सागर की लहरें। ठीक इसी प्रकार जब मन चंचल होता है, जब मन में आवेग उत्पन्न होते हैं, जब मन में हिंसा, क्रोध, लोभ आदि की भावना उत्पन्न होती है तब उन्हें कहा जाता है चित्त-वृत्तियाँ। वृत्ति का मतलब तरंग। इन आंतरिक मानसिक तरंगों को शान्त करना ताकि मन पुन: अपनी शान्त अवस्था को प्राप्त करे, योग ने इसी को अपना ध्येय माना है।

योग को जब हम इस दृष्टिकोण से देखेंगे तो बात समझ में आयेगी कि सबसे पहली शिक्षा है अपने व्यक्तित्व की विभिन्न अभिव्यक्तियों को नियन्त्रित करना तथा इसके पश्चात् उन्हें एक विशेष लक्ष्य की ओर दिशान्तरित करना। लेकिन नियंत्रण के पहले सजग होना जरूरी है। अगर गाड़ी चलाना नहीं जानते हैं और गाड़ी चलायेंगे तो दुर्घटना होगी, क्योंकि प्रशिक्षण नहीं है। प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिये सजगता की आवश्यकता होती है। और इस सजगता की शुरुआत होती है शरीर से, फिर हम लोग जाते हैं मन में।

आज तो विज्ञान ने भी स्पष्ट कह दिया है कि योगाभ्यास के द्वारा शरीर स्वस्थ रहता है। स्वस्थ शरीर की प्राप्ति पहली चीज है और इसी से अनुशासन की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है, ताकि आप अपने भौतिक शरीर के सामर्थ्य के प्रति सजग रहें। उसके बाद फिर हम लोग प्रवेश करते हैं मन में। मानसिक शान्ति योग का दूसरा ध्येय है, लेकिन यह मानसिक शान्ति कोई दार्शनिक विचारधारा नहीं है। मान लीजिये अगर आपमें से कोई हमसे कहे कि 'स्वामीजी, हमें शान्ति चाहिए, इसके लिये हम क्या करें, कौन-सा योग करें' तो हमारा जवाब होगा, 'आप कहते हैं हमें शान्ति चाहिए। इसका मतलब आप स्वयं को अशान्त अनुभव करते हैं। अशान्त क्यों अनुभव करते हैं? इसके पीछे कोई कारण जरूर होगा। कारण को पहले जानो, तब हमसे पूछना कि इस कारण को कैसे दूर करके हम शान्ति पायें। तब हम बतला पायेंगे। लेकिन अगर आप कहेंगे कि हमें शान्ति चाहिए, उसका कोई उत्तर नहीं मिल पायेगा।'

मैं आपसे स्पष्ट कहता हूँ, दुनिया में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जो आपको जाने बिना आपको शान्ति का मार्ग बतला सके। आपको अपने आपसे सम्पर्क स्थापित

करना है, अपने को स्वयं सम्हालना है और स्वयं को जानना भी है। इसीलिये सभी मनीषी कहते हैं, स्वयं को जानो। लेकिन इसे हम लोगों ने एक दार्शनिक वाक्य बना दिया है। इसका व्यावहारिक प्रयोग होना चाहिए। स्वयं को जानने का मतलब होता है अपनी आंतरिक प्रतिक्रियाओं को, व्यवहार को, आचरण को, विचारों को सबसे पहले देखा जाए। उन्हें संयत बनाने का प्रयत्न किया जाए। जब हम उन्हें संयत बना पायेंगे तब मन में ये जो तरंगें तूफान की तरह उत्पन्न होती हैं, उन्हें शान्त करने में समर्थ हो सकेंगे।

अब हम लोगों को देखना है कि किस प्रकार हम अपने जीवन में एक अनुशासन को लागू कर सकें, क्योंकि यह निश्चित है कि जब हमारा मन एकाग्र होगा, इसकी चंचलता जब समाप्त हो जायेगी, तभी हमारी मानसिक एवं बौद्धिक प्रतिभा विकसित होगी। जब यह प्रतिभा विकसित होती है, तब एक विशेष गुण के रूप में जाग्रत होती है जिसे हम लोग कह सकते हैं सदाचार। मैं पुन: आप से अनुरोध करता हूँ कि सदाचार को धार्मिक दृष्टि से मत देखिये। सदाचार को व्यावहारिक दृष्टि से देखिये, जिसका मतलब होता है, संयत आचरण।

एक और उदाहरण का सहारा लेता हूँ। जिस प्रकार हम अन्न ग्रहण करते हैं और उसके पोषक तत्त्वों को ग्रहण करने के बाद अपशिष्ट तत्त्वों का निष्कासन करते हैं, ठीक इसी प्रकार हम अपने आंतरिक जीवन में भी ऐसे अनेक तत्त्वों को ग्रहण करते हैं, जो हमारी भावनाओं और विचारों का पोषण करते हैं। पोषण के पश्चात् जो विकार मन के भीतर जमा होते हैं, उन्हें हम बाहर कैसे निष्कासित करें? अगर हम पानी पीते हैं, भोजन करते हैं, तो वह अपना काम करके फिर बाहर निकल जाता है। पर जिस विचार को हमने ग्रहण किया, वह भी अपना काम करता है, लेकिन बाहर नहीं निकल पाता है। इसी कारण दुनिया में आजकल मनोवैज्ञानिक समस्याएँ बहुत बढ़ रही हैं। किसी को मानसिक रोग हो जाता है, कोई अपनी स्मृति खो बैठता है, कोई पागल हो जाता है। इनका एक ही कारण है, अन्दर का मल अंदर में ही जमा रह गया, बाहर निकला ही नहीं। जिस प्रकार से हम लोग शारीरिक मल का त्याग करते हैं, उसी प्रकार हमें एक ऐसी स्थिति उत्पन्न करनी है जिससे हम अपने मानसिक मल का भी त्याग कर सकें।

विश्रान्ति और एकाग्रता की कला

यहीं पर योग काम आता है। जब हम शरीर को स्वस्थ बनाकर मन के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं तो मानसिक क्षेत्र में सबसे पहले विश्राम करने की कला सिखलाई जाती है। यह विश्राम करने की कला हर मनुष्य के लिये अलग है। विद्यार्थी को एक प्रकार से विश्राम करना सिखलाया जाता है, व्यवसायी को दूसरे प्रकार से विश्राम करना सिखलाया जाता है, एक बुजुर्ग को अन्य प्रकार से विश्राम करना सिखलाया जाता

है, क्योंकि इन सभी में तनाव का प्रभाव अलग-अलग होता है। विश्राम की कला सिखाकर, व्यक्तित्व के सभी सूक्ष्म स्तरों को तनावमुक्त करके, फिर मन को एक बिन्दु पर केन्द्रित करने की शिक्षा मिलती है।

जब मन एकाग्र होता है, तब आपको दस बार कोई चीज रटने की आवश्यकता नहीं रहती। एक बार देखा या सुना और समझ गये। मन की ग्रहणशीलता इतनी तीव्र हो जाती है कि कुछ विशेष गुण विकसित होने लगते हैं, जो हमें अस्वाभाविक लग सकते हैं। स्वामी विवेकानन्द जी के बारे में पढ़ते हैं कि उनकी स्मृति फोटोग्राफिक थी। एक बार कुछ देख लेते थे तो भूलता नहीं था। हर कोई चाहता है कि उसकी स्मृति फोटोग्राफिक हो जाए, लेकिन उस अवस्था को प्राप्त करने के लिये मानसिक प्रशिक्षण आवश्यक है।

ये क्षमताएँ असाधारण दिखलाई देती हैं, लेकिन जो व्यक्ति उस अवस्था में पहुँच चुका है, उसके लिए यह साधारण मानसिक प्रक्रिया है। जब लोगों ने हवाई जहाज को पहली बार देखा, तो सोचा कि इतनी भारी मशीन हवा में कैसे उड़ सकती है। उस समय वह एक प्रकार की असाधारण चीज थी, लेकिन अब तो उसमें कुछ असाधारण नहीं दिखलाई देता। ठीक इसी प्रकार से मन की प्रतिभाओं में कुछ असाधारण नहीं है, वह केवल मन के गुणों का सही सम्मिश्रण है। इसको आप चाहे जो भी नाम दें। हिन्दी में कहते हैं, प्रतिभा-सम्पन्न। इस प्रतिभा को प्राप्त किया जा सकता है एकाग्रता के द्वारा।

चाहे कोई बच्चा हो, युवक हो या बुजुर्ग, मानसिक क्रिया का रूप सबके भीतर एक प्रकार का होता है। इसी को नियंत्रित करने की कला हमें जाननी है। अभिव्यक्ति अलग प्रकार की हो सकती है। एक छोटा बच्चा मिट्टी के खिलौने के लिये रोता है। बड़ा होकर वही बच्चा बड़े खिलौने के लिये रोता है, दूसरी तरफ आकृष्ट हो जाता है। इच्छा का रूपान्तरण हो गया, लेकिन मन तो वही है। अधिक रचनात्मक, अधिक प्रभावशाली बनना मन के प्रबंधन पर निर्भर है। इसी प्रबंधन की शिक्षा अगर हमें मिले, तो उसे हम आत्माभिमुख शिक्षा कहेंगे।

आज तक जो पद्धतियाँ उपलब्ध हुई हैं, उनमें योग को ही लोग स्वीकार कर रहे हैं, क्योंकि यह भौतिक और मानसिक, दोनों आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इसलिए अवसर मिलने पर आप एक अभिभावक के रूप में, अपनी संतान को योग-पद्धति से अवश्य अवगत करायें। और यह भी निर्णय लें कि उन्हें अच्छे संस्कार मिलें। अगर आप संस्कार नहीं दे सकते हैं तो बच्चे का जीवन सुखी, सम्पन्न और विकसित नहीं होगा। समाज पतन की ओर जायेगा। लेकिन अगर आप अपने स्तर से अच्छे संस्कार दे सकते हैं, तो एक पीढ़ी के बाद आपको यह कहने का अवसर ही नहीं आयेगा कि समाज कितना बिगड़ गया है। संस्कार देने का दायित्व आप पर है और शिक्षा देने का दायित्व हम लोगों पर है। आइये, दोनों मिलकर काम करें।

रिखियापीठ में गुरुकुल शिक्षा पद्धति की स्थापना

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

जब मैं स्वामी सत्यानन्द जी के साथ झारखण्ड के एक अनजाने गाँव, रिखिया में आई थी, तो ऐसा अनुभव हुआ कि मैं सोलहवीं शताब्दी में चली गयी हूँ। इससे अधिक पिछड़ेपन की कल्पना नहीं की जा सकती थी। यहाँ इक्कीसवीं सदी का चिह्न तक दिखलाई नहीं देता था–न सड़कें, न बिजली, न फोन, न अखबार, न मोटर-गाड़ियाँ, न ही कोई अस्पताल। बस खण्डहर जैसा एक वीरान-सा स्कूल था जिसमें फटे-पुराने कपड़ों में लिपटे कुछ बच्चे आया करते थे।

सन् 1989 में 23 सितम्बर के दिन हमने इसी रिखिया में प्रवेश किया था। स्वामी सत्यानन्द जी ने इस स्थान को एकान्तवास के लिए चुना था, क्योंकि त्र्यम्बकेश्वर में जब वे तप कर रहे थे तो उन्हें यहाँ आने का आदेश प्राप्त हुआ था। यहाँ आने के बाद श्री स्वामीजी ने तत्काल साधना आरम्भ कर दी। उन्होंने पंचाग्नि और अष्टोत्तरशत लक्ष पुरश्चरण जैसी अत्यन्त कठिन साधनाओं का संकल्प लिया।

इसी समय हमारे पड़ोसियों ने मदद के लिए हमारे दरवाजे पर दस्तक देनी शुरू कर दी। वे भूखे थे, उन्हें दवाओं की, कपड़ों की, सिर पर छत की आवश्यकता थी। ऐसी मौलिक चीजें जिनके बारे में हम कभी सोचते भी नहीं, उन्हें उपलब्ध नहीं थीं। किसी तरह हमने उनकी सहायता प्रारम्भ की और फिर चारों ओर से मदद आने लगी। हमारा काम सन् 1995 में प्रारम्भ हुआ जब श्री स्वामीजी ने

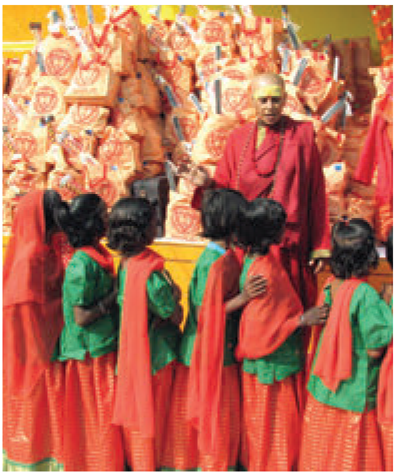

ईश्वरादेश की पूर्ति के लिए इस कार्य को भगवदाराधना मानकर व्यवस्थित ढंग से करने के निर्देश दिये। आज आप उसी स्थान और उन्हीं लोगों को देख रहे हैं, विशेष रूप से बच्चों को। पन्द्रह-बीस साल पहले ये जिस दशा में थे, आप शायद ही उसकी कल्पना कर पायेंगे।

यह सब कैसे सम्भव हुआ? वही बच्चे जिनमें उस समय नज़रें मिलाकर बात करने लायक आत्मविश्वास नहीं था और 'तुम्हारा नाम क्या है?' ऐसे

सहज-से प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाते थे, वही आज रिखियापीठ की सभी गतिविधियों का नेतृत्व कर रहे हैं। वे बढ़िया अंग्रेजी बोलते हैं, आश्रम का कैलेन्डर तैयार करते हैं, सभी कार्यक्रमों का संचालन करते हैं, भावविभोर होकर कीर्तन और नृत्य करते हैं, संस्कृत मंत्रों के शुद्ध उच्चारण के साथ यज्ञ का अनुष्ठान इस प्रकार करते हैं कि पण्डित भी उन्हें ध्यान से सुनने लगते हैं।

मुझे वह दिन याद है जब गाँव की एक छोटी-सी लड़की ने हमारे द्वार पर दस्तक दी और लजाते हुए कहा कि वह अंग्रेजी पढ़ना चाहती है। हमने भी झिझकते हुए उसे 'ए बी सी' सिखाना आरम्भ किया। उस दिन जिस छोटे-से बीज को बोया गया था, वह 1,500 से अधिक बच्चों के एक विशाल वटवृक्ष के रूप में विकसित हो गया है और यह संख्या बढ़ती ही जा रही है।

एक बात याद रहे, ये बच्चे बहुत गरीब परिवारों से आते हैं। ये भाग्यहीन बच्चे समाज द्वारा पूरी तरह उपेक्षित होते हैं। एक बच्चे को टूथब्रश, टूथपेस्ट, साबुन, कंघी, तौलिया या शौचालय जैसी जिन मौलिक सुविधाओं की आवश्यकता होती है, ये उनसे भी वंचित रहते हैं। मेरी राय में इन बच्चों के जीवन का कायाकल्प ही रिखिया की मुख्य उपलब्धि है।

रिखिया श्री स्वामीजी के सिद्धान्तों पर आधारित एक प्रयोग है। उनके अनुसार शिक्षा बाहर से थोपी जाने वाली कोई चीज नहीं, बल्कि अंदर से प्रकट होने वाली प्रक्रिया है जो तब सम्भव होती है जब बच्चे को एक सकारात्मक वातावरण में प्रोत्साहन, प्रेरणा, पहचान, विश्वास, उत्तरदायित्व तथा स्नेह प्राप्त होता है, जैसा कि शिक्षा की गुरुकुल पद्धति में होता है।

श्री स्वामीजी हमेशा कहते हैं कि जब आप किसी निरे अयोग्य व्यक्ति को योग्य बना देते हैं तो यह एक बड़ी उपलब्धि होती है। काम तो प्रशिक्षित व्यक्तियों से भी कराये जा सकते हैं, लेकिन इसमें आपका क्या योगदान रहा? इसके बजाय यदि आप किसी निकम्मे व्यक्ति को किसी काम के लायक बना देते हैं, तो आप उसकी बहुत बड़ी सेवा करते हैं।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए हमने रिखिया की चुनौती को स्वीकार किया था। हमने अपना काम लड़कियों से प्रारम्भ किया था क्योंकि वही समाज में सबसे अधिक उपेक्षित थीं। उनके माता-पिता उन्हें स्कूल भेजना या शिक्षित करना

आवश्यक नहीं समझते थे। वे लड़कियाँ घर के ऐसे छोटे-मोटे काम करने के लिए बाध्य थीं जिन्हें और कोई करने के लिए तैयार नहीं था। दूसरे शब्दों में उन्हें या तो किसी काम के लायक नहीं समझा जाता था या परिवार पर बोझ समझा जाता था।

श्री स्वामीजी ने चमत्कारिक ढंग से सब कुछ बदल डाला। उन्होंने इन लड़कियों को 'कन्या' नाम दिया, जिससे हर व्यक्ति के मन में इनके लिए आदरपूर्ण स्थान बन गया, क्योंकि कन्या-पूजन भारतीय समाज का अभिन्न अंग है। प्रत्येक भारतीय की, चाहे वह धनी हो या गरीब, शिक्षित हो या अशिक्षित, कन्या-पूजन में अगाध श्रद्धा होती है। मेरी समझ से यह इन लड़कियों के लिए चमत्कार सिद्ध हुआ। यह पहचान और सम्मान मिलने के कारण इनमें गहन परिवर्तन आने लगे।

हमने जब कन्याओं के साथ काम शुरू किया तो इन पर आने-जाने के लिए कोई नियम नहीं थोपा। इन्हें अपनी इच्छा से आने-जाने की छूट दी गयी। उसके बाद प्रश्न यह उठा कि इन्हें क्या पढ़ाया जाए। हम सब योग के प्रशिक्षित शिक्षक हैं, योग हमारी स्वाभाविक पसन्द थी और हम सब जानते थे कि उनके मानसिक विकास के लिए योग कितना लाभप्रद होगा। लेकिन हमने अपनी पसन्द थोपने के बदले उनसे यह जानना चाहा कि वे क्या पढ़ना चाहते हैं। हमारे आश्चर्य की ठिकाना नहीं रहा जब उन्होंने कहा, 'अंग्रेजी'! चिथड़ों में लिपटे बच्चे, जो ठीक से अपनी मातृभाषा भी नहीं बोल सकते थे, वे इस युग की सबसे व्यापक भाषा सीखना चाहते थे!

बहरहाल उन्हें अंग्रेजी सिखाने का सिलसिला शुरू हुआ। कभी वे आती थीं, कभी नहीं भी आती थीं। लेकिन इस पर हमने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। एक सुबह जब बच्चे नहीं आये थे, तब हममें से कुछ संन्यासी संस्कृत में मंत्रोच्चार करने के बाद कीर्तन कर रहे थे। तभी कुछ बच्चे आये और हमारे साथ कीर्तन करने लगे। उन्हें यह सब इतना अच्छा लगा कि वे नियमित रूप से आने लगे और जल्दी ही उन्होंने बिना किसी प्रयास के सारे मंत्रों का उच्चारण और कीर्तन करना सीख लिया।

धीरे-धीरे हमें उनके आत्मविश्वास के स्तर में अन्तर स्पष्ट दिखाई देने लगा। उनकी प्रतिक्रिया बेहतर थी, उनके चेहरों पर चमक आ गई थी, उनकी चाल में सहजता, आकर्षण और संतुलन आ गया था। वे अपने सभी कार्यकलापों के प्रति इतने अधिक उत्साहित होते गये कि सहज रूप से सबकुछ सीखने लगे। मंत्रोच्चार ने उनके मानसिक विकास की दिशा में चमत्कारपूर्ण कार्य किया, ज्ञान प्राप्त करने में वे अधिक माहिर हो गये।

मानसिक विकास ऐसी प्रक्रिया है जो मन के उन सारे अदृश्य बन्धनों को खोल देती है जो ज्ञान के उदय को रोकते हैं। संस्कृत मंत्रों एवं स्तोत्रों के निरंतर पाठ से यह प्रक्रिया उन बच्चों के अन्दर शुरू हो गई थी। संस्कृत ऐसी भाषा है जो विशुद्ध रूप से ध्वनि पर आधारित है। ध्वनि के माध्यम से यह भाषा मुँह, गले, नाक, तालु और जीभ में स्थित ऊर्जा केन्द्रों को क्रियाशील करती है, जिनका सीधा सम्बन्ध

मस्तिष्क के उच्चतर केन्द्रों से होता है। इन केन्द्रों के जागरण के लिए मंत्रोच्चारण शुद्ध और नियमित होना चाहिए। इन बच्चों ने दोनों ही शर्तों को पूरा किया और आज हम उसका परिणाम देख रहे हैं।

मंत्रोच्चारण और कीर्तन नादयोग के अभिन्न अंग हैं जो आंतरिक क्षमताओं को जाग्रत करने के लिए ध्वनि का उपयोग करते हैं। नादयोग के साथ हमलोगों ने यज्ञ के अनुष्ठान को भी सम्मिलित कर लिया, जिसमें मंत्रोच्चारण किया जाता है। इन सरल उपायों ने उन पर जादू जैसा काम किया।

आज बगल के स्कूल में लड़कियों की उपस्थिति शत-प्रतिशत होती है और वे सभी क्षेत्रों में बाजी मार ले जाती हैं। कन्याओं की प्रत्यक्ष प्रगति को देखकर हमने छोटे लड़कों को भी सम्मिलित करने का निर्णय लिया, नहीं तो रिखिया की लड़कियाँ उन पर पूरी तरह छा जातीं। स्वामी सत्यानन्द जी ने उन्हें 'बटुक' नाम दिया, क्योंकि कन्या पूजन में बटुकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इससे उन सबके बीच स्पर्धा और सहयोग की अद्भुत भावना उत्पन्न हो गई है।

पहले ये बच्चे कुएँ के उस मेंढक के समान थे जो कुएँ के बाहर की दुनिया की कल्पना भी नहीं कर सकता। आज इनके मन में नये द्वार और नये आयाम खुल गये हैं। वे आशा कर सकते हैं, आकांक्षा कर सकते हैं, स्वप्न देख सकते हैं और उन स्वप्नों को साकार भी कर सकते हैं। यह सब केवल एक विशेष व्यक्ति, स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के कारण सम्भव हो पाया, जिन्होंने सन् 1989 में यहाँ कदम रखा और गुरुकुल शिक्षा पद्धति की नींव रखी।

–'बच्चों के लिए योग शिक्षा–2' से उद्धृत

मतदान केंद्र

रिखिया कन्या के रूप में मेरे अनुभव

सीनू कुमारी, ग्राम पनियापगार, रिखिया पंचायत

जनवरी 1998 में मैंने पहली बार रिखिया आश्रम जाना शुरू किया। उस समय मैं छः साल की थी। उसके बाद से जनवरी 13, 2007 तक एक 'रिखिया कन्या' के रूप में मैं आश्रम के निकट सम्पर्क में रही।

प्रारंभ के वर्षों में मैं केवल अंग्रेजी कक्षा के लिए आश्रम जाया करती थी। मुझे अंग्रेजी पढ़ना, लिखना और उसमें बातचीत करना सिखाया जाता था। मुझे कुछ मंत्र, स्तोत्र और कीर्तन भी सिखाये गये। अंग्रेजी की कक्षा में मैंने सरस्वती वन्दना को गाना सीखा जिसे मैंने एक बार अन्य कन्याओं के साथ मिलकर श्री स्वामीजी के सामने गाया। मैं उस दिन बहुत खुश थी।

मुझे अंग्रेजी की कक्षा में जाना बहुत अच्छा लगता था। कक्षा का वातावरण बहुत सहज और आनन्ददायक था। हमें खेल के माध्यम से अंग्रेजी सिखायी जाती थी। अंग्रेजी के साथ-साथ हमने नृत्य, संगीत और चित्रकला भी सीखी। मुझे इन सभी चीजों में बहुत आनन्द आता था, इसलिए मैं कक्षा शुरू होने के कुछ मिनट पहले ही आश्रम पहुँच जाती थी। अंग्रेजी सीखने के सभी साधन कक्षा में ही उपलब्ध थे। किताबें, कॉपियाँ, पेंसिलें, यहाँ तक कि यूनीफॉर्म भी आश्रम द्वारा प्रदान किये जाते थे। कभी-कभी शब्दकोश, ज्योमेट्री बॉक्स, कहानियों की किताबें, खिलौने, छाते इत्यादि भी उपहार के रूप में दिये जाते थे। ये सभी चीजें स्कूल में बहुत काम आती थीं।

कक्षा में विज्ञान तथा सामान्य ज्ञान सम्बन्धी कुछ अच्छी पुस्तकें थीं जिनसे मुझे अनेक क्षेत्रों में अपने ज्ञान का विस्तार करने में सहायता मिली। हालाँकि मैंने हिन्दी माध्यम से प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा प्राप्त की है, लेकिन आश्रम के सहयोग से मेरी अंग्रेजी भी काफी अच्छी हो गई है। इससे मुझे उच्चतर शिक्षा के लिए अंग्रेजी माध्यम को अपनाने में सहायता मिली है।

बसन्त पंचमी के उपलक्ष्य में पहली बार मैंने अन्य कन्याओं के साथ मिलकर 'सरस्वती महासरस्वती' कीर्तन गाया। धीरे-धीरे हम लोगों ने आश्रम के अन्य कार्यक्रमों तथा दैनिक संध्याकालीन कार्यक्रमों में भी कीर्तन-भजन गाना आरम्भ किया। बाद में हमें स्तोत्र भी सिखाये गये। चैत्र और आश्विन नवरात्रि के दौरान आश्रम में रामचरितमानस पाठ शुरू किया गया। कुछ समय के बाद हर एकादशी को सम्पूर्ण भगवद्गीता का और हर पूर्णिमा को सुन्दरकाण्ड का पाठ आरम्भ किया गया। शुरू में हम सिर्फ सुनते थे, लेकिन धीरे-धीरे हमें पाठ करना सिखाया गया। अन्त में हम कन्याओं ने ही पाठ करना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार हमलोगों ने मंत्रपाठ और कीर्तन में संन्यासियों का स्थान ले लिया।

मुझे प्रसन्नता है कि श्री स्वामीजी ने हमें इन कार्यक्रमों के संचालन का अवसर दिया। कीर्तन या पाठ के दौरान उपस्थित लोगों को मंत्र-मुग्ध देखकर हमें बेहद संतोष होता था। कभी-कभी ऐसा भी होता कि जब हम कीर्तन कर रहे होते तो अन्य लोगों के साथ-साथ स्वामी निरंजन जी और स्वामी सत्संगी जी भी भावविभोर होकर नृत्य करने लगते!

यह हमारी श्रद्धेया स्वामी सत्संगी जी के कुशल एवं योग्य मार्गदर्शन के कारण ही सम्भव हो पाया। हमलोगों ने सभी कीर्तन, स्तोत्र एवं मंत्र स्वामी सत्संगी जी से ही सीखे। रामचरितमानस का पाठ संन्यासी मंत्रनिधि ने सिखाया। कुछ अन्य संन्यासियों ने भी इस कार्य में हमारी सहायता की। रिखिया की सभी कन्याओं एवं बटुकों की ओर से मैं उन सब को धन्यवाद देती हूँ और विनम्र प्रणाम करती हूँ।

प्रारम्भ में आश्रम की कक्षाओं के लिए केवल कन्याओं को लिया गया था जिनकी संख्या केवल बारह या तेरह थी। अब कन्याओं की संख्या पाँच सौ से ज्यादा है। कुछ साल बाद लड़कों को भी लिया गया जिनकी संख्या भी पाँच सौ से अधिक है। अब कुछ कन्या-बटुक कम्प्यूटर की कक्षाओं के लिए भी आश्रम जाते हैं। मैंने सबसे पहले कम्प्यूटर की शिक्षा वहीं प्राप्त की।

पिछले कुछ वर्षों में कन्याओं एवं बटुकों को आश्रम से कम-से-कम दस जोड़े वस्त्र प्रदान किये गए हैं। ये वस्त्र देश-विदेश के विभिन्न भक्तों द्वारा प्रत्येक वर्ष दान किये जाते हैं। अन्य कन्याओं की भाँति मैं भी उन वस्त्रों को प्राप्त कर बहुत प्रसन्न होती। उन वस्त्रों में से कुछ पारम्परिक थे और कुछ आधुनिक, जिन्हें पहनकर मुझे बहुत खुशी होती थी।

श्री स्वामीजी, स्वामी निरंजन जी, स्वामी सत्संगी जी तथा अन्य संन्यासियों से प्राप्त स्नेह एवं प्रेम के कारण आश्रम परिसर में हमलोग एकदम निश्चिन्त, तनावमुक्त और आनन्दमग्न रहते थे। मैं एक उदाहरण देती हूँ। एक बार सीता कल्याणम् के कुछ दिन पहले मैं कुछ कन्याओं के साथ तपोवन क्षेत्र में खेल रही थी। स्वामी निरंजन जी यज्ञ की तैयारियों का निरीक्षण करने आये। हमें देखकर

उन्होंने एक कन्या से कूदने वाली रस्सी ली और खुद भी रस्सी कूदने लगे! उन्हें अपने साथ खेलते देखकर हम सब बहुत खुश हुए और हँसने लगे।

आश्रम के माध्यम से मैं विश्व के कोने-कोने से आने वाले विभिन्न जातियों, धर्मों और राष्ट्रों के लोगों से मिली हूँ। मैंने उनसे बातचीत की और उनकी संस्कृति तथा समाज के विषय में बहुत कुछ सीखा। मैंने भारत के विभिन्न भागों तथा विश्व के अनेक स्थानों से आश्रम आने वाले बच्चों से भी दोस्ती की। उनके साथ खेलने और उनसे बातें करने में सचमुच बड़ा आनन्द आता था।

रिखिया आश्रम में विभिन्न धर्मों से सम्बन्धित त्योहार मनाये जाते हैं। मैने वहाँ पहली बार क्रिसमस मनाया। एक बार ईरान की कुछ महिलाएँ एक योग सत्र के लिए आश्रम आई हुई थीं। सत्र के दौरान एक दिन 'तज़िया मुहर्रम' था। हमलोगों ने सूफ़ी मंत्र 'अनल हक़' गाया और उन लोगों ने भी कुछ सूफ़ी गीत सुनाये।

रिखिया की एक कन्या के रूप में प्रतिवर्ष मुझे आश्रम में दो बार रामचरितमानस, बारह बार सुन्दरकाण्ड और चौबीस बार भगवद्गीता का सम्पूर्ण पाठ करने के दुर्लभ अवसर तथा अनुभव प्राप्त हुए। आश्रम में ही मैंने पहली बार अनेक प्रकार के देश-विदेश के व्यंजनों का स्वाद प्राप्त किया। मेरे और भी ढेरों अनुभव और स्मृतियाँ हैं जिनका वर्णन कर पाना सम्भव नहीं। अंत में मैं इतना ही कहूँगी कि मुझे एक 'रिखिया कन्या' होने पर गर्व है।

बाल योग दिवस का उद्देश्य

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

हमलोग आश्रम में 14 फरवरी को बाल योग दिवस के रूप में मनाते हैं और यह दिन उन बच्चों को समर्पित है, जो योग से जुड़े हैं, जिन्होंने योग को अपने जीवन में अपनाया है और योग के माध्यम से अच्छे संस्कार प्राप्त किए हैं। हमारे गुरुजी ने प्रारम्भ से ही बच्चों पर विशेष ध्यान दिया। उन्होंने अपने जीवन काल में ही बाल योग मित्र मण्डल का बीज डाला था और उस बाल योग मित्र मण्डल के प्रथम सदस्य थे हम।

अपने जीवन की योग यात्रा में हमने देखा कि किस प्रकार गुरुजी ने हमें आगे बढ़ने का अवसर दिया, अपने जीवन की प्रतिभाओं को व्यक्त करने का अवसर दिया। जब हम भारत लौटे तब मन में यही विचार था कि बच्चों के साथ कुछ किया जाए। बड़े लोग केवल अपनी परेशानी को लेकर आते हैं, संस्कार को लेकर नहीं। वे केवल अपने जीवन को ठीक करना चाहते हैं, अपनी बीमारी और परेशानी को दूर करना चाहते हैं। लेकिन घर-परिवार में व्यवस्था, समाज और राष्ट्र में अनुशासन तथा जीवन में शान्ति और प्रतिभा की अभिव्यक्ति नहीं हो पाती है। क्या योग अथवा आध्यात्मिक जीवन का प्रयोजन केवल अपनी ही परेशानियों को दूर करना है?

हमारे पास लोग आते हैं, सोचते हैं कि महात्मा जी हमें कुछ भस्म दे देंगे, कुछ कर देंगे जिससे हमारा कष्ट दूर हो जायेगा। मैं तो सभी से कहता हूँ कि मैं उस प्रकार का साधु नहीं हूँ जो भस्म देकर कह दे कि जाओ बेटा, तुम्हारा काम हो

जायेगा। वह तरीका हमें आता ही नहीं। हम संघर्ष करके आगे बढ़े हैं, आप लोगों को तो मालूम ही है कि दस साल की उम्र में अकेले विदेश भेज दिए गए। सत्तर के दशक में यह सरल कार्य तो था नहीं, लेकिन जो अवसर गुरुजी ने हमें दिया और जिस प्रतिभा को विकसित करने का मौका उन्होंने प्रदान किया, उसके बल पर हम अपने पैरों पर खड़े हो सके। वही जीवन की पूर्णता है। आदमी बिना किसी सहारे के अपने दो पैरों पर निश्चिन्त होकर खड़ा हो सके, पूर्ण आत्म-विश्वास के साथ, अमीरी में या गरीबी में, सम्पन्नता में या विपन्नता में, सुख में या दु:ख में, शान्ति में या अशान्ति में, वही जीवन की सिद्धि भी है। जब तक व्यक्ति अपने दो पैरों पर आत्म-विश्वास के साथ खड़ा है, वह डगमगाता नहीं है।

यही वह चीज है जो बच्चों को एक संस्कार के रूप में प्रदान की जा सकती है। बड़े लोग केवल अपने बारे में सोचते हैं, अपने स्वास्थ्य, अपने पॉकेट, अपनी इच्छाओं और महत्त्वाकांक्षाओं के बारे में ही सोचते हैं। समाज से सहारे और सहयोग की अपेक्षा करते हैं, लेकिन वे समाज को कुछ देना नहीं चाहते। सत्य बात है, चाहे किसी को पसन्द आए या न आए। लेकिन अगर नई पीढ़ी को हम एक अच्छे संस्कार से युक्त कर सकें जो उनकी प्रतिभा को विकसित करने में सहायक बने तो निश्चित रूप से हम कुछ पीढ़ियों के अन्तराल में एक अच्छे भविष्य की कल्पना कर सकते हैं। बाल योग दिवस इसी उद्देश्य को समर्पित है।

संस्कार, स्वावलम्बन और राष्ट्र-संस्कृति-प्रेम

बाल योग मित्र मण्डल की स्थापना सन् 1995 में सात बच्चों से की गई थी और आज इस मित्र मण्डल में पचास हजार से अधिक बच्चे संस्कार और प्रशिक्षण लेकर जा चुके हैं। मुंगेर नगर में ही करीब पाँच हजार योग शिक्षक बच्चे तैयार बैठे हैं। मुंगेर जिले में करीब चालीस हजार बच्चे आश्रम और योग से जुड़े हैं। इस प्रकार एक सहज और मौन आन्दोलन के रूप में योग इन बच्चों के जीवन में संस्कार, स्वावलम्बन और राष्ट्र-संस्कृति-प्रेम–इन तीन उद्देश्यों को पूरा करता है। इन्हीं तीन उद्देश्यों से युक्त इस बाल योग मित्र मण्डल की स्थापना की गई सन् 1995 में।

उन्नीस साल बीत चुके हैं और हमलोगों ने बीसवें वर्ष में प्रवेश किया है। इन बीस वर्षों में इन बच्चों की जो यात्रा रही है उससे मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है, क्योंकि जो बच्चे बीस साल पहले बाल योग मित्र मण्डल में शामिल हुये थे, वे आज समाज में प्रतिष्ठित नागरिकों के रूप में विद्यमान हैं। अच्छा कार्य करते हैं, घर का वातावरण अच्छा है, उनके बच्चे अच्छे हैं, स्वभाव में सौम्यता है, शील है, संयम है, अनुशासन है, प्रसन्नता है, सुख है और जीवन में कुछ पाने की तमन्ना भी है। वे लोग इस बात को समझते हैं कि जो चीज हमने सीखी है वह हमारे आत्मज्ञान या मोक्ष के लिये नहीं, बल्कि अपनी ही प्रतिभा और हुनर को बढ़ाने के लिये है।

जीवन का लक्ष्य

मैं भी आप लोगों से बहुत बार बोल चुका हूँ कि मेरे जीवन का लक्ष्य न तो ईश्वर-साक्षात्कार है, न ही समाधि या मोक्ष। मेरे जीवन का उद्देश्य यही है कि मैं अपनी प्रतिभाओं को सकारात्मक रूप से व्यक्त कर सकूँ जिससे मुझे जीवन की पूर्णता का आभास हो और दूसरों को भी उससे प्रेरणा, सुख और शान्ति मिले।

हर व्यक्ति कर्म के अधीन रहता है। कर्म से मुक्त कोई नहीं होता। केवल सोचकर या ध्यान लगाकर ही हम शान्ति नहीं पाते, बल्कि जिस परिस्थिति और परिवेश में हम रहते हैं, उससे समझौता करके, उसके सकारात्मक रूप को पहचानकर हम उसका सदुपयोग करना सीखते हैं। यही मनुष्य जीवन का लक्ष्य भी होना चाहिये, नहीं तो आदमी अपना पूरा जीवन व्यर्थ गँवाता है। आदमी सोचता है कि जन्म लेना है, पढ़ाई करनी है, परिवार बसाना है, नौकरी करनी है, पेंशन लेनी है और मर जाना है।

क्या कहें अहबाब, हम कारें-नुमाया कर गए,
बी.ए. हुए, नौकर हुए, पेंशन मिली, फिर मर गए।

यही तो जीवन का क्रम है न? अब इसमें कोई थोड़ा-बहुत नाम कमा लेता है, कोई यश कमा लेता है, कोई ऊपर बैठता है तो कोई नीचे बैठता है। लेकिन क्रम तो यही है जीवन में। अब सवाल उठता है कि क्या इसीलिये हमलोगों का जन्म होता है या हमलोगों का जन्म अपने जीवन को निखारने के लिये, सुन्दर बनाने के लिये होता है? हमें विश्वास है कि अगर ईश्वर को हमलोग सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् कहते हैं, तो अपने जीवन को सुन्दर बनाना ईश्वरत्व की प्राप्ति है, मुक्ति की प्राप्ति है, मोक्ष की प्राप्ति है, क्योंकि उसी सौन्दर्य में सुख, शान्ति और समृद्धि–तीनों प्राप्त होते हैं।

आज बाल योग दिवस के इस शुभ अवसर पर इन बच्चों को बहुत सारी बधाइयाँ और मंगलकामनाएँ। जिन अभिभावकों ने अपने बच्चों को यह अवसर प्रदान किया है कि आश्रम जाओ और वहाँ पर कुछ सीखो, उनके प्रति भी आज हम अपना आभार व्यक्त करते हैं, क्योंकि जब तक माता-पिता का आशीर्वाद नहीं होता है बच्चों को कुछ प्राप्त भी नहीं होता। आप अभिभावक लोग चाहें तो इन बच्चों को सीधा मना कर सकते हैं कि आश्रम मत जाओ, वहाँ तुम्हें साधु बना देगा। लेकिन आप ऐसा नहीं करते, बल्कि स्वीकार करते हो कि ठीक है, आश्रम जायेंगे तो कुछ अच्छी चीजें ही सीखेंगे। इसलिए आप सबके प्रति भी हम अपना साधुवाद और आभार व्यक्त करते हैं। अगली पीढ़ी में आप लोगों के प्रयास की आवश्यकता नहीं होगी क्योंकि ये बच्चे अपने बच्चों को अपने आप यहाँ पर डालने वाले हैं!

–14 फरवरी 2015, गंगा दर्शन

मेरे जीवन में गुरु और योग का चमत्कार

आहिर जगदीश रवजी (जिज्ञासु भावचैतन्य), भुज, गुजरात

सन् 2001 में भुज में एक भीषण भूकम्प आया। मेरा घर टूट गया। उस समय मैं 13 वर्ष का था। मेरी कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि यह क्या हो गया। न तो हमारे सर पर छत रही और न खाने को अन्न। सन् 2004 की गुरुपूर्णिमा पर स्वामी निरंजनानंद सरस्वती ने भुज में भूकम्प पीड़ित बच्चों के लिए 'शिवानन्द बालकाश्रम' की स्थापना की, तो यह हमारे लिए किसी वरदान से कम नहीं था।

मैं बहुत गरीब परिवार से था, हमारी आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी। भूकम्प हादसे के बाद मैं और मेरा परिवार बहुत अभाव में रहने लगे थे। उनके पास मुझे पढ़ाने के लिए पैसे भी नहीं थे। मैं पढ़ाई करना चाहता था, इसलिए मैंने शिवानन्द बालकाश्रम, भुज जाने का निर्णय लिया। श्री मोहन भाई, श्री जय भाई शाह और भावना बेन शाह ने मेरी बहुत मदद की।

जब तक मैं घर में रहता था, पढ़ाई में बहुत कमजोर था। इतना कमजोर कि आठवीं क्लास में दो बार फेल हुआ। बालकाश्रम में मुझे बहुत प्रोत्साहन और सहायता मिली। वहाँ रहते हुए मैंने नौवीं, दसवीं, ग्यारहवीं और बारहवीं की पढ़ाई पूरी की। जब बारहवीं क्लास में मेरे 62% नम्बर आए तो मेरे परिवार और गाँव वाले कितने खुश हुए थे!

बालकाश्रम में मुझे सबसे अच्छा जो लगा, वह था प्रात: आसन-प्राणायाम का अभ्यास और संध्या में स्तोत्र पाठ, भजन-कीर्तन और ध्यान जो संन्यासी प्रेममणि

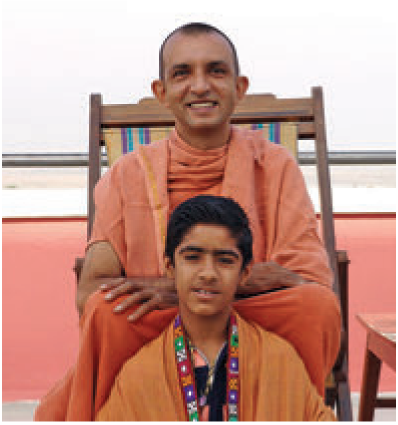

सिखाते थे। इन सभी अभ्यासों से मेरा मन बहुत शान्त हुआ। मेरी चिन्ता कम हुई, आत्मविश्वास बढ़ा। पहले मैं बहुत डरता था, लेकिन मैंने देखा कि अब मैं निर्भय होता जा रहा हूँ। मैं जो भी सोचता, कर लेता था। तभी से मुझे योगाभ्यास करना बहुत अच्छा लगने लगा। योग द्वारा कैसे मन को एक बिंदु पर निर्देशित कर सकते हैं, यह भी मैंने प्रत्यक्ष अनुभव किया। तभी मैंने निर्णय लिया कि मैं बिहार योग विद्यालय अवश्य जाऊँगा।

मेरा यह सपना सन् 2005 में पूरा हुआ जब मैं पहली बार गंगादर्शन आया। इस दौरान मुझे स्वामी निरंजन जी के साथ योग यात्रा पर जाने का अवसर भी मिला और सन् 2006 में राजनाँदगाँव में गुरुपूर्णिमा के शुभ अवसर पर उन्होंने मुझे मंत्र में दीक्षित किया।

स्वामीजी से मंत्र पाते ही मेरा सारा शरीर आनंद से भर गया। उसी दिन से मेरे आध्यात्मिक जीवन का सूत्रपात हुआ। उसके बाद मैं शिवानन्द बालकाश्रम, भुज लौट आया जहाँ मैं अपनी नियमित साधना करता रहा।

पुन: वर्ष 2008 में मैं सेवा करने के उद्देश्य से मुंगेर आश्रम आया। जो भी सेवा मिलती, मैं पूरे उत्साह से करता। इस दौरान मुझे स्वामीजी के निकट सान्निध्य में रहने का अवसर तो मिला ही, ऊपर से सत्संग लाभ भी। मानो सोने पे सुहागा। समय रहने पर मैं अम्माजी के पास भी जाता और उनसे बातचीत करता। वे बड़े प्रेम से अपने अनुभव सुनातीं, जिन्हें मैं बड़े ध्यान से सुनता।

सन् 2009 में मैंने चातुमार्सिक यौगिक अध्ययन सत्र में भाग लिया। भविष्य में कुछ अच्छा करने, दूसरों की मदद करने और अपने पैरों पर खड़ा होने की इच्छा ले मैं शिवानन्द बालकाश्रम वापिस लौट आया। आते समय जब मैं स्वामीजी को प्रणाम करने गया तो उन्होंने कहा, 'जो भी करना, शेर बन कर करना। बिल्ली बनकर करोगे तो सब पीछे पड़ेंगे और डराएँगे। मन लगाकर पढ़ो और अपने को शिक्षित बनाओ। साथ-साथ योग के प्रकाश को भी अपने जीवन में जलाए रखो। अपने मन को कठिन परिश्रम में लगाओ। तुम्हारे सामने उज्ज्वल लक्ष्य है।'

मैंने स्वामीजी को अपनी जिन्दगी के दो साल दिए और जो मैं पाँच साल में भी नहीं कर सकता था, वह मुझे स्वामीजी ने दो साल में ही दे दिया। मैंने जीवन में हवाई जहाज देखा तक नहीं था, पर अचानक स्वामीजी के आशीर्वाद से मुझे हवाई जहाज में मुम्बई से भुज जाने का मौका मिला। उन्होंने मुझे एक लैपटॉप भी दिया।

स्वामीजी ने और स्वामी कृष्णप्रिया ने मुझे उसे शुरू करना और बन्द करना सिखाया। इस अनमोल उपहार और आशीर्वाद के साथ मैं भुज आश्रम वापिस आ गया।

जुलाई 2010 में मैंने सरकारी जनरल अस्पताल में श्री कमलकांत भाई भट्ट के सहयोग से नि:शुल्क योग कक्षा सिखाना प्रारम्भ किया। उन्होंने मुझे बहुत अवसर दिए। इससे मेरा आत्मविश्वास बढ़ा। साथ-ही-साथ मैं कम्प्यूटर भी सीखता रहा और अपनी ग्रेजुएशन की पढ़ाई भी करता रहा।

फरवरी 2011 में कम्प्यूटर ऑप्रेटर की नौकरी करने दक्षिण अमेरिका के चिली देश जाने का अवसर मिला। इसके लिए वीज़ा भी मिला, लेकिन कागज़ात पूरे न होने के कारण एयरपोर्ट में एमिग्रेशन केन्सिल हो गया। मुझे लगा मेरे जीवन के सब रास्ते बंद हो गए। मैं हिम्मत हार गया। मुझे कुछ भी समझ नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूँ।

मैं आश्रम जीवन की संचित स्मृतियों में खो जाता, पुन: स्वामीजी द्वारा सत्संग में कही बातों को स्मरण करता– 'उतार-चढ़ाव, लाभ-हानि, सुख-दु:ख तो जीवन में आते ही रहते हैं, इनसे घबराना नहीं चाहिए। केवल वही, जो सुख-दुख को उड़ते हुए बादल समझता है और अपने लक्ष्य के प्रति सजग रहता है, वास्तव में सुखी बन पाता है। समतल का नाम जीवन नहीं, बल्कि उतार-चढ़ाव का नाम ही जीवन है। ऐसा न सोचो कि जीवन में सदा एकरसता ही रहेगी। संघर्ष का नाम ही जीवन है।'

मुझे अम्माजी की बातें भी याद आने लगीं। वे कहती थीं– 'कष्ट से ही प्राप्ति होती है। कष्ट से हमें भागना या डरना नहीं चाहिए। जीवन में कष्ट ही नहीं होंगे तो आगे बढ़ने का आनन्द कैसे पाएँगे, सीखेंगे कैसे? कष्ट सहने के फलस्वरूप ही हमें बुद्धि और विवेक की प्राप्ति होती है। महान व्यक्ति बनने के लिए कष्ट सहने ही होते हैं।'

कुछ दिनों तक मेरा मन बहुत अशान्त रहा। एक समस्या यह भी थी कि मैंने विदेश जाने के लिए श्री पंचाभाई आहिर की फैक्ट्री से सत्तर हजार रुपए का कर्ज लिया था। कैसे भी उस राशि को मुझे चुकाना था। मैंने सोचा, 'सौभाग्य न सब

दिन सोता है, देखें आगे क्या होता है?' और उसी फैक्ट्री में नौकरी करने लगा। हर माह पाँच हजार रुपए चुकाकर किसी तरह ऋणमुक्त हुआ। योग तो मैं सिखाता ही था। साथ-ही-साथ बच्चों को अंग्रेजी भी पढ़ाना शुरू किया। मैं स्कूल, अस्पताल, कॉलेज आदि, जहाँ भी अवसर मिलता, योग शिविर का आयोजन करता रहता।

इस तरह मेरी योग यात्रा चलती रही। 21 जून 2015, विश्व योग दिवस के अवसर पर मैंने दो योग शिविरों का आयोजन किया। प्रात: तोलानी कॉलेज आदिपुर में, जहाँ 1500 प्रतिभागियों ने और संध्या मधेपुर में, जहाँ 60 प्रतिभागियों ने भाग लिया। जहाँ भी सिखाता, सभी को सत्यानंद योग करके बहुत आनन्द आता। वे कहते, 'बिहार योग परम्परा का शान्ति पाठ सुनते ही शरीर और मन शान्त हो जाते हैं। इस चमत्कारिक योग का कोई शान्तिपाठ और शिथिलीकरण ही कर ले तो पर्याप्त है।'

1 जनवरी 2013 को मैंने अपने छोटे-से गाँव पद्दर में स्वतंत्र रूप से कम्प्यूटर क्लास प्रारम्भ की। मैं पूरे दिन काम करता और व्यस्त रहता। प्रतिदिन पचास-साठ

किलोमीटर मोटरसाइकिल से यात्रा करता। मेरी दिनचर्या आश्रम जीवन की तरह ही थी। यहाँ तक कि मैं नाश्ता और भोजन भी निर्धारित समय पर नियम से करता। आज भी मेरा दैनिक टाइम-टेबल इसी प्रकार है।

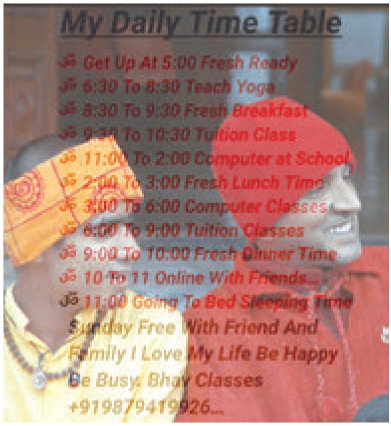

स्वामीजी के आशीर्वाद से 1 जनवरी 2015 को मैंने 'स्वामी निरंजन भाव क्लास' का शुभारम्भ किया। यहाँ मैं योग, कम्प्यूटर और अंग्रेजी सिखाता हूँ। मैं आज बहुत खुश हूँ। सेवा के रूप में दसवीं कक्षा के छात्रों को निःशुल्क कोचिंग देता हूँ। ऐसा करके मन और अधिक खुश हो जाता है।

आज मेरे पास अपना खुद का घर और सेन्टर है। यह सब स्वामीजी के आशीर्वाद का ही परिणाम है। मेरा जीवन बहुत व्यस्त है, लेकिन इसी में आनन्द है। यह सब मैंने आश्रम से ही सीखा। स्वामीजी का सादा-सरल जीवन, मधुर स्वभाव, मिलनसारिता एवं स्वावलम्बन मुझे सदा प्रेरणा देते रहेंगे।

मैं तो बस यह जानता हूँ कि विघ्न तो जीवन के हर क्षेत्र में आते हैं। अभाव झेलने पड़ते हैं, दुःख सहन करने पड़ते हैं, समस्याओं से जूझना पड़ता है, लेकिन यदि गुरु हो और उनके बताए मार्ग पर चलते रहो तो लक्ष्य प्राप्त हो ही जाता है। स्वामीजी की बातें सारगर्भित होती हैं। उनमें ज्ञान, अनुभव और भाव होता है। उसी भाव को मैं अपने भीतर चैतन्य रखना चाहता हूँ।

मुझे बच्चे बहुत अच्छे लगते हैं। दिनभर उनके साथ काम करता हूँ। स्वामीजी से जो भी सीखा, उन्हें सिखाता हूँ। मैंने जीवन में जो कुछ भी प्राप्त किया है, वह सब स्वामीजी के ही कारण है। उनके द्वारा बताए गए कठिन परिश्रम, सेवा, साधना, सरलता और सच्चाई के सिद्धांत को आत्मसात् करते हुए निरन्तर योगमार्ग पर अग्रसर होता रहूँ। विपत्तियों में कदम न डगमगाएँ, मन विचलित न हो और उनका आशीष हर पल मेरे साथ रहे, यही उनके चरणों में विनम्र प्रार्थना है।

किशोरावस्था में योग द्वारा व्यक्तित्व विकास

संन्यासी शिवऋषि, चेन्नई

सत्यानंद योग केन्द्र, चेन्नई योग को जीवन के हर क्षेत्र में, विशेषकर बच्चों तक पहुँचाने में जुटा है। चेन्नई में इस काम को शुरू करने की प्रेरणा मुझे बाल योग मित्र मण्डल, मुंगेर से प्राप्त हुई। मैं सन् 2003 में गंगा दर्शन, मुंगेर आया था। आश्रम में लगभग ढाई महीने रह चुकने के बाद एक दिन रविवार को सुबह साढ़े चार बजे मैं आश्रम की सैर पर निकला। कारपार्क में मैंने करीब एक हजार बच्चों को खड़े देखा। वहाँ बिल्कुल शान्ति थी। यह मेरे लिए बड़ी हैरानी की बात थी। एक हजार बच्चे अपने आप, बिना किसी निर्देशन के बिल्कुल शांत और अनुशासित तरीके से खड़े, ऐसा पहले कभी नहीं देखा था। मानो अनुशासन उन बच्चों का स्वभाविक अंग बन गया था। मुझे लगा कि ऐसा मेरे राज्य, तमिलनाडु में भी होना चाहिए। मैंने स्वामी निरंजनानंद जी से बातचीत की और बच्चों के साथ काम करने की अनुमति माँगी। मेरे प्रस्ताव को सुनकर वे प्रसन्न हुए और कहा, 'हाँ, यह काम जरूर करो।'

तमिलनाडु में हम निस्सहाय और अभावग्रस्त बच्चों के लिए काम करते हैं। आपको वह सुनामी याद होगा जिसने कुछ साल पहले भारत के पूर्वी तट पर तबाही मचाई थी। उस तूफान में अनाथ हुए लगभग 400 बच्चों के लिए हमने टीचर ट्रेनिंग कोर्स शुरू किया। दो वर्ष में वे प्रशिक्षित योग शिक्षक हो जाएँगे। उस जिले का शिक्षा विभाग भी जिले के हर सरकारी स्कूल में योग प्रशिक्षण देने के लिए सहमत हो गया है। हम अन्य अनाथ बच्चों के लिए भी कार्य करते हैं। हम करीब ढाई सौ ऐसे बच्चों को आश्रम लाए जिनके अभिभावक नहीं थे। जब वे स्वामी सत्यानंद जी और स्वामी निरंजनानंद जी से मिले तो उन्हें अहसास हुआ कि उन्होंने कुछ नहीं खोया है। संतों के दर्शन करने के बाद वे श्रद्धा और आनन्द से भर गए।

किशोरों पर योग अनुसंधान

हमारा कार्यक्षेत्र इस समय करीब दस हजार बच्चों तक फैल चुका है। जिस अनुसंधान को मैं यहाँ प्रस्तुत करने जा रहा हूँ, वह बच्चों के एक विशेष समूह से संबंधित है। हम सभी व्यक्तिगत तौर पर इस बात से सहमत होंगे कि योग से स्वास्थ्य और व्यक्तित्व सुधरता है, लेकिन इस अनुसंधान का उद्देश्य इस तथ्य को ऐसे लोगों के समक्ष प्रमाणित करना था जो शिक्षाविदों और नीति निर्धारकों के चिंतन को प्रभावित कर सकें। इसीलिए इस शोध की शुरुआत की गई।

आप लोग जानते होंगे कि दिमाग के दोनों हिस्सों पर काम करना जरूरी है ताकि व्यक्तित्व का एकतरफा विकास होने के बजाय सर्वांगीण विकास हो। इस

अनुसंधान में हम विशेष रूप से यह देखना चाहते थे कि योगाभ्यास द्वारा व्यक्ति के बायें मस्तिष्क से संबंधित तार्किक, बौद्धिक तथा अन्य प्रतिभाओं पर क्या प्रभाव पड़ता है।

यहाँ गौरतलब है कि इस शोध में शामिल बच्चे चेन्नई समाज के उच्च वर्ग से संबंध रखते हैं। वे सम्पन्न एवं संभ्रांत घरों से हैं, अच्छे स्कूलों में पढ़ते हैं और वे अपने चयनित क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ बनने के लिए प्रयासरत हैं। मैं यह बात इसलिए बता रहा हूँ क्योंकि कुछ परिणाम, जो बाद में दिखाई देंगे, यह दर्शाते हैं कि कम प्रतिभाशाली और कम बुद्धिमान बच्चों में योगाभ्यास के बाद आश्चर्यजनक विकास देखने को मिला। जो पहले से मेधावी थे, उनमें भी विकास अवश्य हुआ, लेकिन उस हद तक नहीं।

मैं ईमानदारी के साथ कह सकता हूँ कि योग के प्रभाव का सबसे बड़ा प्रमाण मैं खुद हूँ। शोध के लिए मैं जिस डी.ए.वी. स्कूल गया, मैं वहीं पढ़ा करता था और स्कूल का सबसे नालायक विद्यार्थी था। जब मैं अपने पुराने स्कूल में योग सिखाने के उद्देश्य से गया तो सबसे पहले प्रधानाध्यापिका के कमरे पहुँचा। दरवाजा खटखटाकर जैसे ही अन्दर प्रवेश किया तो देखा कि वे मेरी गणित की पुरानी अध्यापिका थीं। मैं गणित में बहुत कमजोर था और अपनी शिक्षिका को रुला दिया करता था। जब उनके कमरे में घुसा तो वे किसी कार्य में व्यस्त थीं। थोड़ी देर बाद उन्होंने अपना सिर उठाया। अगर कोई बीस साल बाद अपने पुराने विद्यार्थी से मिलता है तो चाहे वह कैसा भी रहा हो, खुशी होनी चाहिए, है न? लेकिन मुझे देखते ही वे बोलीं, 'तुम! यहाँ क्या करने आए हो?'

मैंने कहा, 'मैं ही वह योग शिक्षक हूँ जिसे आपके स्कूल ने आमंत्रित किया है। मैं इस बात का सबसे अच्छा उदाहरण हूँ कि योग किसी व्यक्ति को किस हद तक बदल सकता है।' यह सुनकर वे खुश हो गईं। उनके लिए इतना ही काफी था कि जो बच्चा उनके लिए हमेशा परेशानी खड़ी करता रहा, वह इतना बदल चुका है। उन्होंने मुझसे कहा, 'अब मैं तुम्हें वही देने जा रही हूँ, जो तुमने मुझे दिया, वह भी थोक में!' उन्होंने मुझे योग प्रशिक्षण के लिए एक क्लास के 55 शरारती लड़के सौंपे। उन्होंने सोचा कि एक-दो दिन में ही मैं रोता हुआ भाग जाऊँगा। दो-तीन दिन बाद वे उस जगह आईं जहाँ मैं बच्चों को योगाभ्यास करवा रहा था। सभी बच्चे आराम से

आँखें बंद करके बैठे थे और चुपचाप मासन-दर्शन कर रहे थे। यह देखकर उनकी आँखों में आँसू तैरने लगे। हैरान स्वर में उन्होंने पूछा, 'यह कैसे संभव हुआ? हम पिछले तीस सालों में बच्चों को ऐसा शान्त नहीं कर पाए जैसा तुमने तीन दिन में कर दिया!' इस तरह अपना योग कार्य शुरू करने का हमें अवसर मिला।

शोध की रूपरेखा

शोध में एक कन्ट्रोल समूह और एक योग समूह शामिल था। हमने शोध से पहले और शोध के बाद के आंकड़े एकत्र किए और इनका वैज्ञानिक विश्लेषण करने के लिए हमने एस.पी.एस.एस. 17 नामक सॉफ्टवेयर इस्तेमाल किया।

शोध के लिए एक साल का समय तय किया गया। योग समूह में डी.ए.वी. ग्रुप के स्कूलों से 673 लड़के-लड़कियों को शामिल किया गया और अन्य सी. बी.एस.ई. स्कूलों से 529 बच्चों को। हमने स्मरण शक्ति नापने के लिए पी.जी.आई स्केल, बुद्धिमता के लिए रेवन्स के एडवांस्ड प्रोग्रेसिव मैट्रिसिज़, आत्मविश्वास के लिए अग्निहोत्री सेल्फ-कॉन्फिडेंस पैमाना और परीक्षा से पूर्व भय और चिंता नापने के लिए एस.टी.ए.आई. पैमाने का प्रयोग किया।

सप्ताह में हम दो बार योग का प्रशिक्षण देते थे, जिसमें हम सरल, सामान्य योगासन सिखाते थे। हमारा उद्देश्य कठिन अभ्यास सिखाना नहीं था, हम चाहते थे कि बच्चे योग से आनंद उठाएँ। हम यह अच्छी तरह समझते थे कि बच्चों को कुछ भी नया सिखाने के लिए उसे रोचक बनाना आवश्यक है। अगर ऐसा नहीं किया जाता, अगर प्रशिक्षण गंभीर रहता तो बच्चे इसे दिल से नहीं करते। इसीलिए हमने अपने योग शिक्षकों को ऐसे तैयार किया है कि वह हर कक्षा का प्रारम्भ और अंत रोचक ढंग से करें।

सभी योग कक्षाएँ चालीस मिनट की थीं। शुरू के पाँच मिनट हम कक्षा को रोचक बनाने और बच्चों को तैयार करने में बिताते थे। इसी तरह अंत के पाँच मिनट भी किसी रोचक गतिविधि में बीतते। योगाभ्यास के लिए हमारे पास तीस मिनट का समय बचता। इस प्रशिक्षण के अंतर्गत शामिल किए गए अभ्यासों की रूपरेखा बगल की स्लाइड में दी गई है।

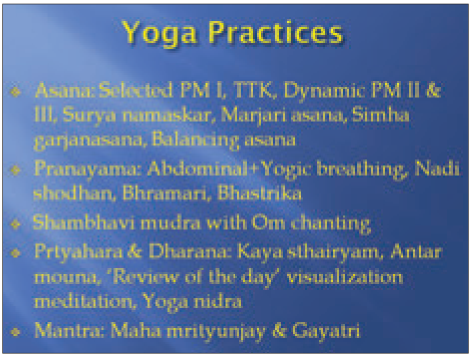

शोध में शामिल बच्चों की उम्र 14 से 16 वर्ष थी। योग समूह में औसत उम्र 15 वर्ष दो महीने तथा कन्ट्रोल समूह में 15 वर्ष 1 महीने थी।

शोध के परिणाम

स्मरण शक्ति– स्मरण शक्ति के मामले में हमने सबसे अधिक सफलता प्राप्त की। ऐसे बच्चे, जो कभी किसी विषय पर ध्यान केंद्रित नहीं कर पाते थे, जिनका ध्यान यहाँ-वहाँ भटकता था, वे इस शोध से सबसे अधिक लाभांवित हुए।

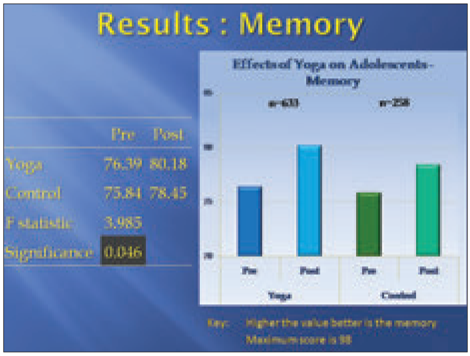

विवेक और बुद्धिमता– विवेक और बुद्धिमता के मामले में भी योग समूह में बड़ा सुधार देखा गया, जबकि कन्ट्रोल समूह में यह बदलाव नहीं के बराबर था। इस परीक्षा में अधिकतम अंक 36 थे। योग समूह के औसत अंकों में 1.75 की वृद्धि हुई।

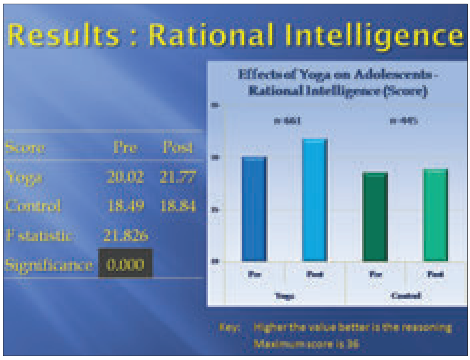

आत्म-विश्वास– जब आप नतीजों को देखते हैं तो आत्म-विश्वास में बहुत ज्यादा सुधार नजर नहीं आता, लेकिन स्कूल प्रशासन से जो जानकारी मिली उससे पता चलता है कि योगाभ्यास करने वाले बच्चे पहले से अधिक आत्मविश्वास और साहस के साथ परीक्षाओं का सामना करते हैं।

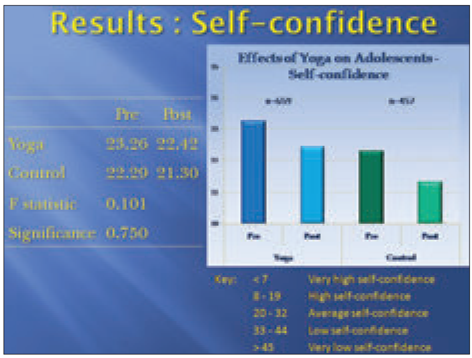

परीक्षा से पूर्व भय और चिंता– हम परीक्षा से पूर्व भय में कोई अंतर नहीं देख पाए। हमने पाया कि बच्चे परीक्षा के समय तनाव में ही रहे क्योंकि यह उनका भविष्य निर्धारित करने वाला का एक महत्वपूर्ण पहलू था। भारत में दसवीं और बारहवीं क्लास की परीक्षाएँ यह तय करती हैं कि उच्च शिक्षा के लिए आप किस ओर बढ़ेंगे। अगर आप इन परीक्षाओं में अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाए तो आपका भविष्य चौपट हो जाता है। इसलिए सभी बच्चों में परीक्षा का तनाव था और हमने इसमें

कोई गिरावट नहीं देखी। इसलिए हमने आगामी वर्षों के लिए अपनी तकनीक में परिवर्तन किया।

बच्चों का अनुभव

हम यह तो नहीं कहेंगे कि प्रशिक्षण के दौरान बच्चे योग के पूर्ण अनुयायी बन गए, लेकिन उन्होंने इससे आनन्द जरूर उठाया क्योंकि उन्हें कक्षा के बीच कई रोचक चीजें करने को मिलतीं। आज अगर आप उनसे योग के बारे में पूछेंगे तो वे इसके सबसे बड़े प्रशंसक और प्रचारक हैं। यह मैं इसलिए कह रहा हूँ कि उनमें से बहुतों ने अपने माता-पिता को हमारे पास भेजा है। वे आकर मुझसे बोलते हैं, 'सर, आप हमेशा खुश रहते हैं, आपको कभी तनावग्रस्त नहीं देखा। आपमें हमेशा बहुत ऊर्जा दिखाई देती है। मेरी माँ को भी कुछ सिखाइये न, वह हमेशा थकान महसूस करती है।'

इस तरह वे केवल योग के प्रशंसक ही नहीं, इसके प्रचारक भी बन गए हैं। वे अब अपने घर, परिवार और समाज में हमारे प्रतिनिधि हैं। 99 प्रतिशत बच्चे इस बात से सहमत हैं कि साल भर की कक्षा के दौरान उन्होंने कम-से-कम दस बार गहन विश्रान्ति का अनुभव किया। बाद में हमने हर बच्चे को दस मिनट की योग निद्रा की ऑडियो फाइल भी भेजी और कहा, 'तुम्हें हर रोज स्कूल से घर लौटते ही यह अभ्यास करना चाहिए।' चेन्नई के स्कूलों में परीक्षा-अंकों को लेकर बहुत अधिक प्रतिस्पर्धा है क्योंकि यही बच्चों का भविष्य तय करता है। उनपर बहुत ज्यादा दबाव रहता है, बहुत-सी उम्मीदें टिकी होती हैं। जब वे स्कूल से घर लौटते हैं, तो कपड़े बदलते हैं और सीधे ट्यूशन के लिए चले जाते हैं। रात के 8-9 बजे तक यही सिलसिला चलता है। इतनी ज्यादा पढ़ाई केवल मस्तिष्क में जानकारियाँ ठूँसने का माध्यम है, वास्तविक शिक्षा नहीं है। इससे बच्चों में तनाव और असंतुलन ही पैदा होता है। इसलिए हमने बच्चों से कहा, 'चूँकि तुम्हें सालभर यह सब करना है इसलिए घर जाते ही यह ऑडियो चलाओ, लेट जाओ, योग निद्रा करो और फिर तुम्हें जो भी करना है, करो।' यह प्रयोग सन् 2009 में शुरू किया गया।

अभिभावकों और अध्यापकों की प्रतिक्रिया

हमारे द्वारा प्रशिक्षित एक छात्रा, स्वाति प्रुष्टि, सी.बी.एस.ई. की टॉपर रही है। उसने योग से प्राप्त लाभों के बारे में बहुत कुछ लिखा है। उसके अनुभव आप हमारी वेबसाइट पर पढ़ सकते हैं। बहुत-से अभिभावकों ने स्वीकार किया है कि योग बहुत कारगर है और वे मानते हैं कि न केवल अपने बच्चों को योग कक्षा में भेजना चाहिए, बल्कि स्वयं भी इसका अभ्यास करना चाहिए। यह उन्होंने अपने बच्चों से सीखा है।

अध्यापक भी योग को अपनाकर बहुत खुश हैं। हम अध्यापकों के लिए अनेक कार्यशालाएँ आयोजित करते रहते हैं। एक बार हमसे एक अध्यापक ने पूछा, 'सर,

हम क्या करें? क्लास में हमारे पास दो तरह के बच्चे हैं। आधे बच्चे बहुत चुस्त, ऊधमी और चंचल हैं। वे बहुत शोर मचाते हैं, भाग-दौड़ और लड़ाई-झगड़ा करते रहते हैं। लेकिन बाकी बिल्कुल सुस्त हैं। इनको कैसे संभाला जाए? एक समूह को थामना पड़ता है तो दूसरे को जगाना। इससे क्लास में बहुत परेशानी है, इससे कैसे निपटें?'

समाधान के रूप में हमने उन्हें एक सरल-से खेल का सुझाव दिया। बच्चे अपनी मेज पर एक गोल बना लें और कागज़ की एक गेंद बनाकर उसके सामने रख दें। खेल का लक्ष्य एक नासिका से तेज रेचक करते हुए गेंद को गोल में डालना है। अध्यापकों को पता है कि कौन बच्चा ऊधमी है और कौन सुस्त। ऊधमी विद्यार्थियों से कहा जाए कि उन्हें बायीं नासिका से तेज सांस छोड़ते हुए इस खेल को खेलना है और सुस्त विद्यार्थियों से इसके विपरीत कहा जाए। बच्चों को खेल के लिए एक मिनट का समय दें। इस एक मिनट में उनका ध्यान इस बात पर केन्द्रित रहेगा कि उन्होंने कितने गोल किए, लेकिन वास्तव में वे इस अवधि में अपनी बायीं या दायीं नासिका से सौ बार सांस ले चुके होंगे। चंचल बच्चों की इडा नाड़ी उद्दीप्त होकर उन्हें शान्त करेगी जबकि सुस्त बच्चों की पिंगला नाड़ी उन्हें ऊर्जान्वित और चुस्त करेगी। इस तरह के छोटे-मोटे खेलों से क्लास का पूरा माहौल बदल जाता है। अचानक सभी बच्चे आराम से अपने स्थान पर बैठ जाते हैं। अध्यापकों को अनेक बार इस प्रकार के अनुभव हुए।

अध्यापकों के लिए आयोजित कार्यशालाओं में हम उन्हें अनेक ऐसे यौगिक खेल सिखाते हैं जिन्हें वे कक्षा के दौरान खिला सकते हैं। ये खेल सजगता से संबंधित हो सकते हैं जैसे ध्वनि के प्रति सजग बनना, स्पर्श या गन्ध के प्रति सजग होना, अपनी धड़कन या नब्ज़ का ख्याल करना आदि। इस तरह की अनेक गतिविधियाँ प्रत्येक कक्षा के आरम्भ में की जा सकती हैं। इन्हें अपनी कक्षाओं में प्रयोग में लाकर अध्यापक बहुत खुश होते हैं और हमारे पास नए खेलों के बारे में जानने के लिए आते हैं।

निष्कर्ष

बच्चों ने सत्यानंद योग की विधियों को खुशी-खुशी अपनाया। उनकी स्मरण शक्ति में वृद्धि हुई। कन्ट्रोल और योग समूह के बीच स्मरण शक्ति का अंतर गौरतलब था। जब से हमने डी.ए.वी. स्कूलों में योग सिखाना शुरू किया, परीक्षा में 80 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों की संख्या शून्य हो गई है। बोर्ड के परीक्षा-परिणाम से स्कूल इतना खुश था कि उन्होंने कहा, 'अब तुम्हें हमारे स्कूल के हर बच्चे को योग सिखाना है!' योग के माध्यम से हम विद्यार्थियों के प्रदर्शन में इस तरह का सुधार देख पाए हैं।

विवेक और बुद्धिमता में भी अच्छा सुधार हुआ, खास तौर पर उन बच्चों में, जो कम प्रतिभाशाली थे, जो पढ़ाई में पिछड़े थे। योगाभ्यास नहीं करने वाले बच्चों

में गिरावट देखी गई। हालाँकि शोध के आँकड़ों से प्रतीत होता है कि बच्चों के आत्मविश्वास पर कुछ खास फर्क नहीं पड़ा, लेकिन लम्बे समय तक योगाभ्यास करने वाले बच्चों में आत्मविश्वास की वृद्धि अवश्य होती है, जो हमने मुंगेर और रिखिया के आश्रमों में प्रत्यक्ष देखा है। शोध से यह भी पता चला कि परीक्षा से पूर्व भय और चिंता कम नहीं हुई। इसके लिए हमने अपने प्रशिक्षण में थोड़ा-सा बदलाव किया। अब सभी बच्चे परीक्षा से पहले पाँच-सात मिनट ध्यान या योग का अन्य कोई अभ्यास करते हैं। इससे तनाव और चिंता में कमी देखी गई है। बच्चों के परीक्षा-परिणामों में भी बहुत सुधार देखा गया। लेकिन इस पर हमारे पास ठोस आंकड़े नहीं हैं क्योंकि जब हम यह अनुसंधान कर रहे थे, उस दौरान सी.बी.एस.ई. ने अपनी परीक्षा-प्रणाली में परिवर्तन करते हुए अंकों की जगह ग्रेड देना शुरू कर दिया। इस वजह से हम अनुसंधान के इस पक्ष को पूरा नहीं कर पाए।

जब हम यह अनुसंधान कर रहे थे तब डी.ए.वी. स्कूलों के लगभग 800 बच्चे हमसे योगाभ्यास सीख रहे थे। इनमें से 673 बच्चों को हमने शोध में शामिल किया क्योंकि शेष छोटी कक्षाओं के थे। आज हम इन स्कूलों में लगभग छः हजार बच्चों को योग सिखा रहे हैं। इन छः हजार बच्चों के अतिरिक्त, हम अन्य कार्यक्रमों एवं गतिविधियों के माध्यम से लगभग दस-ग्यारह हजार बच्चों तक पहुँच रहे हैं। अपने इन सभी प्रयासों को हम पुष्पांजलि के रूप में अपनी गुरु परम्परा को अर्पित करते हैं। इस परम्परा से जुड़कर हम स्वयं को बहुत भाग्यशाली और गौरवान्वित महसूस करते हैं। हम प्रार्थना करते हैं कि हमारा यह प्रयास सतत् जारी रहे और तमिलानाडु का बच्चा-बच्चा इससे लाभान्वित हो। यही मेरा सपना है। बस गुरु परम्परा का आशीर्वाद और आप सबका सहयोग साथ रहे, धन्यवाद!

विद्यार्थी जीवन में योग के अनुभव

स्वाति पुष्टि, चेन्नई

(सन् 2010 में सी.बी.एस.ई. बोर्ड की 12वीं कक्षा की परीक्षा में टॉपर)

जब मैं चेन्नई के डी.ए.वी. उच्चतर माध्यमिक कन्या विद्यालय में दाखिल हुई तब मेरा न केवल एक नई संस्था, एक नये संसार के साथ परिचय हुआ, बल्कि यह योग से परिचय का माध्यम भी साबित हुआ। योग के बारे में मैंने सुना जरूर था कि यह शरीर और मन के लिए अच्छा है। साथ ही यह भी सुना था कि इसका अभ्यास किसी योग्य प्रशिक्षक से सीखकर ही करना चाहिए। इसलिए जब मुझे अपने नये विद्यालय में योग सीखने का अवसर मिला तो मैंने उसे गँवाया नहीं।

ग्यारहवीं क्लास में योग प्रशिक्षण के लिए कोई निश्चित समय निर्धारित नहीं था। अन्य कक्षाओं के बीच कभी-कभार योग की कक्षायें हो जाया करती थीं। मुझे याद है, सबसे पहले हमने ताड़ासन, तिर्यक् ताड़ासन और कटि चक्रासन सीखा। योगासनों से मेरा यह पहला परिचय था और बाद में तो ये मेरे मनपसन्द आसन बन गये। योग-निद्रा का मेरा पहला अनुभव तब हुआ जब एक ऑस्ट्रेलियन स्वामी ने हमारे स्कूल में आकर योग-निद्रा की कक्षा का संचालन किया। परीक्षाओं से पहले भी छोटी-छोटी कक्षाओं का संचालन होता था जिनमें हम तनाव और घबराहट को कम करने के लिए नाड़ी शोधन एवं अन्य प्राणायामों का अभ्यास किया करते थे।

जब मैं बारहवीं क्लास में पहुँची तब योग हमारे टाइम-टेबल में शामिल किया गया। इसके लिए सप्ताह में दो कक्षाएँ निर्धारित की गईं। हम विद्यार्थियों का योगाभ्यास अब नियमित रूप से होने लगा जो ग्यारहवीं क्लास में नहीं हो पा रहा था। मेरे विचार से योग का हमारे टाइम-टेबल में शामिल किया जाना स्कूल प्रशासन का एक बहुत अच्छा कदम था। अगर योगाभ्यास को स्कूल खत्म होने के बाद कराया जाता तो इससे कई बच्चों को असुविधा होती। स्कूल प्रशासन के इस निर्णय से विद्यार्थियों को योग की उपयोगिता का अहसास हुआ, विशेषकर स्कूल के अन्तिम तनावपूर्ण वर्ष में, जहाँ परीक्षाओं का सिलसिला खत्म होने का नाम ही नहीं लेता—पहले स्कूल की ढेरों परीक्षाएँ, फिर बोर्ड की परीक्षा और उसके बाद मेडिकल-इंजीनियरिंग की परीक्षाएँ।

इन योग-कक्षाओं में हमें इस बात का अहसास हुआ कि योग मात्र हाथ-पैर हिलाने-डुलाने वाला व्यायाम नहीं है, जैसा कि हमें प्राय: बताया जाता था। यह प्राणायाम, मंत्र जप, आसन और ध्यान जैसे कई अभ्यासों का संयोजन है। यह अपने मन और शरीर के स्थूल तथा सूक्ष्म स्तरों को समझने की एक सटीक प्रणाली है। योग-कक्षा का निर्धारित समय पौना घण्टा था जो योग के विभिन्न अभ्यासों के लिए सुनियोजित ढंग से विभाजित किया जाता था। आरम्भ में शरीर और मन को योगाभ्यास के लिए तैयार किया जाता और फिर ॐ मंत्र तथा शान्ति मंत्र के उच्चारण

के बाद आसन, प्राणायाम और योग निद्रा के अभ्यास कराये जाते। दिनचर्या के अन्त में होने वाली योग-कक्षा के लिए मैं हमेशा उत्सुक रहा करती थी, क्योंकि दिनभर की पढ़ाई-लिखाई के बाद यह एक अच्छा बदलाव होता। शाम के समय होने वाली योग-कक्षाओं में विद्यार्थियों के अभिभावकों को भी निमंत्रित किया जाता था ताकि वे भी योग के लाभकारी प्रभावों का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकें।

योग के बारे में यदि मेरी स्पष्ट राय माँगी जाए तो मैं यही कहूँगी कि मुझे आसन सबसे ज्यादा पसन्द हैं। आसनों में मुझे सूर्य नमस्कार सबसे अच्छा लगता है। इसका अभ्यास करने के बाद मुझे अत्यधिक ऊर्जा और स्फूर्ति का आभास होता है। सुबह उठने के बाद नींद को भगाने का यह बहुत अच्छा उपाय है। हमारी आधुनिक जीवनशैली बेहद तनावपूर्ण है, और इसमें व्यायाम का तो दूर-दूर तक कहीं नामो-निशान नहीं। आसनों के माध्यम से हमारे शरीर को आवश्यक व्यायाम मिलता है जिससे वह स्वस्थ रहता है। मुझे योग-निद्रा भी पसन्द है। योग-निद्रा के अभ्यास के बाद गहन शान्ति और विश्रांति की अनुभूति होती है। मैंने तीन शक्तिशाली मंत्रों—गायत्री मंत्र, महामृत्युंजय मंत्र और दुर्गा मंत्र के पाठ को भी अपनी दिनचर्या में शामिल किया है। इन मंत्रों के स्पन्दन मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। नाड़ी शोधन और भ्रामरी प्राणायाम के बाद मुझे गहरी विश्रांति का आभास होता है।

मैंने योग के विभिन्न अभ्यासों को निष्ठा और नियमितता के साथ करने की चेष्टा की है। योग शरीर और मन के लिए लाभदायक तो है ही, लेकिन साथ ही इसका एक गूढ़ पक्ष भी है। प्रत्येक अभ्यास के पश्चात् हमारे योग शिक्षक हमेशा कहा करते थे कि शरीर और मन में होने वाले परिवर्तनों या प्रभावों का अनुभव करो और मैंने इसे भी निष्ठापूर्वक करने का प्रयास किया है। कभी-कभी मुझे किसी परिवर्तन का आभास हुआ और कभी नहीं भी। मुझे नहीं मालूम कि अनुभव सही हुए या गलत। लेकिन हमारे योग शिक्षकों ने हमें सदा आश्वासन दिया कि हर प्रकार का परिवर्तन या प्रभाव अपनी जगह ठीक है। और अगर कोई प्रभाव न भी दिखलाई दे तो भी ठीक है। मुझे ऐसा लगता है कि नियमित योगाभ्यास के लाभ को प्रत्यक्ष रूप से समझने और अनुभव करने के लिए मुझे अभी लम्बा रास्ता तय करना है। लेकिन इतना तो जरूर कह सकती हूँ कि योग के साथ इतने कम समय का सम्बन्ध भी मेरे स्वास्थ्य और स्वभाव में काफी सुधार लाया है।

इससे मुझे अपने योगाभ्यास को जारी रखने का प्रोत्साहन मिलता है। योग के सकारात्मक परिणाम सुनिश्चित हैं। मुझे अपने बारे में अच्छा लगता है, तन-मन में उल्लास की भावना रहती है, और देखा जाए तो योगाभ्यास करते रहने का यही पर्याप्त कारण है। मैं आशा करती हूँ कि नियमित अभ्यास द्वारा योग के विस्तृत और व्यापक प्रभावों का अपने जीवन में कभी-न-कभी अनुभव कर सकूँगी। तब तक मेरी योग में दृढ़ श्रद्धा है।

विश्व योग सम्मेलन में बाल योगियों का योगदान

संन्यासी देवांजलि, मुंगेर

सन् 2013 की शुरुआत में स्वामी निरंजनानन्द जी बाल योग मित्र मंडल के बच्चों से सत्यम् वाटिका में मिले। उन्होंने पूछा, 'विश्व योग सम्मेलन के लिए कितने बच्चे अपनी सेवाएँ देने को तैयार हैं?' उनका इतना कहना था कि एक क्षण में हर नन्हा हाथ हवा में था! बच्चों की इस प्रतिक्रिया से उनके गुरुजी का चेहरा खिल उठा और तब से वे बच्चे विश्व योग सम्मेलन की तैयारियों में जी-जान से जुट गए। जैसे-जैसे दूसरे बच्चों में यह बात फैली, हर हफ्ते बाल कार्यकत्ताओं की संख्या बढ़ती गई।

विश्व योग सम्मेलन बाल योग मित्र मंडल के बच्चों के लिए केवल एक नया अनुभव ही नहीं, बल्कि बहुत कुछ सीखने और अपने व्यक्तित्व का विकास करने का अवसर भी था। सम्मेलन की तैयारियों से लेकर सम्मेलन की गतिविधियों तक, विभिन्न विभागों और स्थानों में ये बच्चे बड़े उत्साह और तत्परता के साथ अपने दायित्वों को निभा रहे थे। कुल मिलाकर मंडल के लगभग 600 बच्चों ने सम्मेलन में भाग लिया। अनेक बच्चे पोलो मैदान के पंडाल की व्यवस्था और देखरेख में संलग्न थे जहाँ वे अतिथियों का स्वागत करते और उन्हें उचित स्थान पर बिठाते। कई बच्चे मंच पर स्तोत्रपाठ करते और अपने उमंगभरे कीर्तनों से सबको नाचने पर मजबूर कर देते। अन्य बच्चों की सेवा अखण्ड कीर्तन, भेंट, दीक्षा और किचन जैसे विभागों में थी। इसके अलावा कुछ बच्चे पूजा और हवन की व्यवस्था देखते तो कुछ स्वामीजी की सुरक्षा में तैनात थे।

सभी बच्चे अपनी सेवा और दायित्व के प्रति इतने समर्पित थे कि वे पैदल या साइकिल पर, जैसे भी हो सबेरे सूर्योदय से पहले आश्रम पहुँच जाते थे। उनमें से कई तो दूर-दराज से आते थे, लेकिन सभी समय पर पहुँच जाते। सबसे पहले अपने इंचार्ज को आने की सूचना देते, नाश्ता करते और फिर अपने निर्धारित कार्य में लग जाते। दिनभर वे अपनी सेवा में व्यस्त रहते। जब कभी खाली समय मिलता तो विभिन्न प्रस्तुतियों की तैयारी करते, जिनका उन्हें सम्मेलन के दौरान प्रदर्शन करना था। सबसे ज्यादा आनन्द का अनुभव तब करते जब उन्हें

सम्मेलन के दौरान सत्यम् वाटिका में सुबह से शाम आयोजित अखण्ड कीर्तन में भाग लेने का अवसर मिलता। यहाँ आकर बच्चे खूब नाचते-गाते और पुन: ऊर्जान्वित होकर फिर से अपनी सेवा में जुट जाते।

यह बच्चों का सौभाग्य था कि सम्मेलन में उन्हें दुनियाभर के लोगों के सामने विभिन्न नृत्यों और कराटे का प्रदर्शन करने का अवसर प्राप्त हुआ। इसके लिए उन्होंने कड़ी मेहनत की थी। सम्मेलन के दौरान उनकी मेहनत रंग लाई और सबने उनकी सेवा, प्रतिभा और कला को सराहा। बाल योग मित्र मंडल के एक प्रतिभाशाली प्रतिनिधि को सम्मेलन की कार्यशाला में बच्चों पर हुए योग अनुसंधान के बारे में व्याख्यान देने के लिए चुना गया। कार्यशाला में शामिल सौ से अधिक प्रतिभागी इस अनुसंधान और इसकी प्रस्तुति से बहुत प्रभावित हुए।

सम्मेलन से पूर्व आश्रम में दो बड़े कार्यक्रम, गुरु पूर्णिमा और श्री लक्ष्मीनारायण यज्ञ भी आयोजित हुए। इन कार्यक्रमों के दौरान बच्चों को उनके निर्धारित कार्यों के अभ्यास का मौका दिया गया। बच्चों ने भी इन कार्यक्रमों को सम्मेलन के रिहर्सल के रूप में लिया और अपनी प्रतिभा को और निखारा।

सम्मेलन की तैयारियों से लेकर वास्तविक कार्यक्रम तक बच्चों ने अपने अनुभवों से बहुत कुछ सीखा। उनके पारस्परिक संबंध अच्छे हुए और एकसाथ मिलकर काम करने से सीनियर-जूनियर की भावना भी समाप्त होती गई। इस दौरान अनेक बच्चों ने अपनी प्रसुप्त प्रतिभाओं को प्रदर्शित किया और उनमें से कई नए सितारे उभरकर सामने आए, जो आने वाले दिनों में स्वामीजी के मिशन और बाल योग मित्र मण्डल का नाम और रौशन करेंगे।

गुरु के प्रति उद्गार

सोनू सर्वज्ञ, बाल योग मित्र मण्डल, मुंगेर

समय का दिव्य झूला कभी-कभी पृथ्वी की ओर झुक जाता है और अकस्मात् ही किसी दिव्य विभूति को भूमि पर छोड़ जाता है। वह विभूति कालांतर में अपनी असाधारण प्रतिभा से विश्व को चमत्कृत कर देती है।

हमारे गुरु, स्वामी निरंजनानंद जी, भारत की ऐसी ही विभूति हैं और हमें गर्व है कि हमें एक ऐसे गुरु का सान्निध्य प्राप्त हुआ है जिन्हें समस्त विश्व 'सहजता', 'सरलता' और 'मैत्री' का अवतार मानता है।

इनके मुख पर अद्भुत तेज झलकता है, लगता है मानो इसी तेज से हम बच्चों को आगे बढ़ने की प्रेरणा तथा धैर्यवान् होने की शिक्षा मिल रही है। जब हम स्वामीजी की ओर देखते हैं तो हमारा तनाव, दु:ख-दर्द, चिन्ता इत्यादि खुद-ब-खुद लुप्त होने लगती है और एक नयी ऊर्जा का अनुभव होता है। मन हर्षोल्लास से भर जाता है। इनकी आँखों में देखो तो सारे जगत् का ज्ञान हो जायेगा। इन्हें देखते ही हम खुद को भूल जाते हैं और खो जाते हैं–प्रेम में, भक्ति में, योग में।

यद्यपि मैं अब तक कई साधु-संतों से मिला हूँ, बहुतों के साथ कुछ दिन रहने का भी सौभाग्य मिला है, आध्यात्मिकता की ओर रुचि होने के कारण कई तांत्रिक साधकों का भी सान्निध्य प्राप्त हुआ है, परन्तु आज जब मैं अपने गुरु, स्वामीजी को देखता हूँ तो सचमुच सबकुछ भूल जाता हूँ तथा इनके सामने उन सबों का ज्ञान बौना प्रतीत होता है।

छ: वर्ष की उम्र से ही भजन-कीर्तन और महात्माओं के सत्संग में मेरी रुचि रही है। एक दिन मुझे ट्यूशन पढ़ाने वाले अध्यापक ने स्वामीजी के बारे में बताया। फिर तो मैंने उत्सुक होकर उनसे आश्रम और स्वामीजी के बारे में अनेक जानकारियाँ लीं। 1 जनवरी 2011 को मैं पहली बार आश्रम आया और उस दिन मुझे स्वामीजी का दर्शन हुआ, जब आश्रम में हनुमान चालीसा का पाठ हो रहा था।

उनके दर्शन मात्र से मुझे असीम आनंद हुआ। कहा भी गया है– *गुरु ते कोने कहे वाय, जेने जो वाथी शीश झुकी जाय*– जिन्हें देखते ही अपना मस्तक श्रद्धा से झुक जाए, उनका नाम होता है गुरु। मेरे साथ भी ठीक ऐसा ही हुआ। मैं सबकुछ भूलकर उनके चरणों में नतमस्तक हो गया। ऐसा गुरु कहाँ मिलेगा जिन्हें देखते ही पूरा व्यक्तित्व बिना सोचे ही श्रद्धा से झुक जाए।

फिर तो मैं आश्रम के प्रत्येक कार्यक्रम में भाग लेने लगा और सन् 2012 में मेरा बाल योग मित्र मण्डल में नामांकन भी हो गया। मैं काफी प्रसन्न हुआ क्योंकि अब तो मुझे अपने गुरुजी का सान्निध्य मिल गया था।

यहाँ आश्रम में हम बच्चों को योग के साथ-साथ कराटे, कीर्तन-भजन, स्तोत्रपाठ, पेन्टिंग, हवन, पूजा, नृत्य आदि की शिक्षा दी गयी। जीवन जीने का आधार मिला। हर व्यक्ति अपना जीवन अपने-अपने तरीके से जीता है, परन्तु हम बच्चों को यहाँ जीवन का महत्त्व और अर्थ बताया गया, जीवन जीने की शैली बताई गई। यह सब स्वामीजी की ही कृपा है। आज भी हम बच्चे जब स्वामीजी को देखते हैं तो पता नहीं हम बच्चों को क्या हो जाता है! हम सब बहुत उत्साहित हो जाते हैं और बेहद आनंद का अनुभव होता है। उनकी उपस्थिति मात्र से चारों ओर खुशी छा जाती है, मन प्रफुल्लित हो जाता है।

आज के युग में ऐसे गुरु का सान्निध्य पाना अत्यंत दुर्लभ है। हम बच्चों को अनेक विद्याओं में निपुण बनाकर, हमारे अन्दर छिपी शक्ति को जगाकर हमें राष्ट्र-सेवा के लिये प्रेरित करना कोई सामान्य बात नहीं है।

एक आदर्श अध्यापक ही आदर्श शिष्य उत्पन्न कर सकता है। विवेकानंद बनाने के लिये रामकृष्ण परमहंस के समान बनने की जरूरत होगी। शिवाजी जैसा योद्धा उत्पन्न करने के लिये रामदास जैसी दृढ़ता अपनानी होगी। हम बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिये स्वामीजी द्वारा किए गए कार्य ही उनकी महानता को दर्शाते हैं। और इस पर मेरे गुरु तो सहजता, सरलता और ज्ञान के अवतार हैं– *आनंद सागर गुरु महाराज, मेरे गुरु निरंजनानन्द ज्ञान अवतार।*

सागर में छिपे रत्न तो तभी प्राप्त होंगे जब कोई गोताखोर उसकी गहराइयों में गोता लगायेगा। ऊपर से टटोलने वाले को तो केवल घोंघे ही प्राप्त होंगे। ठीक उसी प्रकार हमारे गुरु को देखकर उनके ज्ञान की थाह पाना अत्यंत कठिन ही नहीं, असंभव-सा है। वे हम बच्चों के साथ खेलते हैं, कीर्तन में नृत्य करते हैं, परन्तु जब वे सत्संग देते हैं तो मानो माँ सरस्वती उनके मुख में विराजमान हो जाती हैं। उनके ज्ञान को समझने तथा ग्रहण करने के लिये हमें खुद को गोताखोर बनाना होगा ताकि उनके 'ज्ञान सागर' में गोता लगाकर उसमें छिपे अमूल्य रत्नों को प्राप्त कर सकें।

जय गुरुदेव!

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

बच्चों के लिए योग शिक्षा-1

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

पृष्ठ 298, ISBN: 978-81-85787-77-0

शिक्षा का तात्पर्य है मनुष्य का सर्वांगीण विकास। ऐसा नहीं होना चाहिए कि विद्यार्थी को केवल किताबी ज्ञान से भर दिया जाए, जो उसकी बुद्धि के ऊपर तैरता रहे। सच्चा ज्ञान अपने अन्दर से ही शुरू हो सकता है और अपने अन्दर के ज्ञान की परतों को खोलने के लिए योग ही माध्यम है। योगाभ्यास न केवल बच्चों के शरीर को लचीला बनाता है, अपितु उनमें एक अनुशासन तथा मानसिक सक्रियता भी लाता है, जिससे उनका अवधान तथा एकाग्रता बढ़ती है एवं सृजनात्मक क्षमता में वृद्धि होती है।

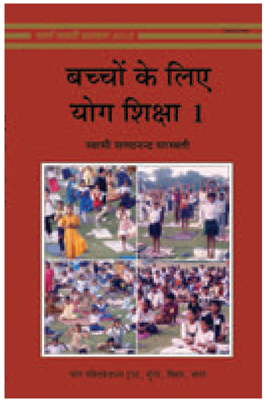

उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें–
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, पी.ओ.गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

दूरभाष : 91-6344-222430, 6344-228603, 09304799615 फैक्स : 91-6344-220169

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा।

सत्यानन्द योग वेबसाइट

SATYANANDA YOGA
BIHAR YOGA

www.biharyoga.net
यह बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट है जिसमें सत्यानन्द योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती तथा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट सम्बन्धी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

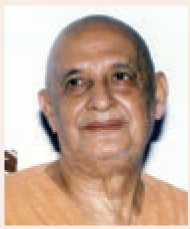

www.rikhiapeeth.in
यह वेबसाइट सभी साधकों के लिए स्वामी शिवानन्द जी की 'सेवा, प्रेम और दान' की मौलिक शिक्षाओं से जुड़े रहने का सुगम साधन है। यहाँ रिखियापीठ की गतिविधियों, कार्यक्रमों और सत्रों की जानकारी के अतिरिक्त प्रेरक सत्संग भी उपलब्ध हैं।

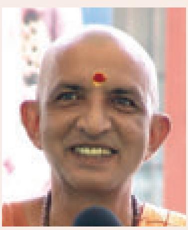

'यौगिक जीवन' स्वामी निरंजन के संग
www.biharyoga.net/living-yoga/ पर श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के उत्तराधिकारी स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के मिशन सम्बन्धी लेख, संदेश एवं समाचार उपलब्ध हैं।

www.yogamag.net
योगा पत्रिका की इस आधिकारिक वेबसाइट पर पिछले तीस वर्षों की प्रतियों का संग्रह है। इस निरंतर वर्धमान संग्रह में विभिन्न श्रेणियों की खोज सुविधा भी उपलब्ध है।

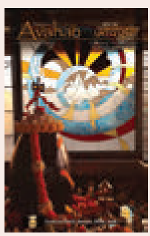

आवाहन वेबसाइट
www.biharyoga.net/sannyasa-peeth/avahan/ पर संन्यास पीठ की द्वैमासिक पत्रिका, *सत्य का आवाहन* उपलब्ध है, जिसमें श्री स्वामी शिवानन्द, श्री स्वामी सत्यानन्द एवं स्वामी निरंजनानन्द की शिक्षाओं तथा संन्यास पीठ की गतिविधियों की जानकारी है।

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. HR/FBD/298/16-18
  Office of posting: BPC Faridabad
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

bar code

योगपीठ के सत्र एवं कार्यक्रम 2016

जनवरी 1	श्री हनुमान चालीसा पाठ (108 बार)
फरवरी 2-मई 29	चातुर्मासिक योग अध्ययन सत्र (हिन्दी)
फरवरी 9-12	श्री यंत्र आराधना
फरवरी 13	बसंत पंचमी महोत्सव, बिहार योग विद्यालय का स्थापना दिवस
फरवरी 14	बाल योग दिवस
फरवरी 21-27	योग कैप्सूल–श्वास सम्बन्धी (हिन्दी)
मार्च 20-अप्रैल 3	योग कैप्सूल–पूर्ण स्वास्थ्य (हिन्दी)
अप्रैल 24-30	योग कैप्सूल–पाचन सम्बन्धी (हिन्दी)
जुलाई 15-18	गुरु पूर्णिमा सत्संग कार्यक्रम (हिन्दी/अंग्रेजी)
जुलाई 19	गुरु पादुका पूजन
अगस्त 1-30	योग अनुदेशक सत्र (हिन्दी/अंग्रेजी–भारतीयों के लिए)
सितम्बर 24-30	हठ योग–षट्कर्मों का विशेष सत्र (हिन्दी/अंग्रेजी)
अक्टूबर 1-30	बिहार योग शिक्षकों के लिए प्रगतिशील प्रशिक्षण (अँग्रेजी)
अक्टूबर 3-जनवरी 29	चातुर्मासिक योग अध्ययन सत्र (अंग्रेजी)
अक्टूबर 22-28	राज योग–आसन-प्राणायाम का विशेष सत्र (हिन्दी/अंग्रेजी)
नवम्बर 5-11	क्रिया योग–प्रारम्भिक (हिन्दी/अंग्रेजी)
दिसम्बर 19-23	योग चक्र की तृतीय श्रृंखला (हिन्दी/अंग्रेजी)
दिसम्बर 25	स्वामी सत्यानन्द जन्मदिवस
प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 5 एवं 6 तारीख	श्री स्वामी सत्यानन्द जी की महासमाधि का स्मरणोत्सव
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ

आश्रम में मोबाइल फोन लाना वर्जित है। अपना मोबाइल फोन कदापि अपने साथ न लाएँ।

उपर्युक्त सत्रों/ कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें–

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

फोन : 06344-222430, 06344-228603, 9304799615 फैक्स : 06344-220169

वेबसाइट : www.biharyoga.net

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु अपना पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।